

सम्बोधि की छाया में

—काश्यप

सम्बोधि की छाया में

[ऐतिहासिक नाटिका]

प्रणेता

श्री अर्जुन चौबे काश्यप

प्रिंसिपल, सच्चिदानन्द सिन्हा कॉलेज, औरंगाबाद (गया)

सरस्वती प्रकाशन

औरंगाबाद (गया)

प्रथमावृत्ति 1000

मूल्य 1-50 नए पैसे

साहित्यकार श्री हंसकुमार तिवारी

को

उनके सहज स्नेह की

मधुर स्मृति में

आशंसा

विहार-भूमि में समय ने अनेक अभिनय खेले और उसके रंगमंच की आभा उसके अनेक अभिनेताओं के क्रिया-कलापों से सदा एक रंग से चमकती चली आ रही है। भूत की इन गरिमाओं के चित्र देखता-देखता आज राजा गय की नगरी में आ पहुँचा और देखा आचार्य काश्यप जी 'सम्बोधि की छाया में' शान्ति ले रहे हैं। काश्यप जी एक सफल नाटककार एवं सुन्दर अभिनेता हैं। सुन्दर अभिनेता ही सुन्दर नाटककार हो सकता है यह अपना विचार है। अनेक ऐसे प्रख्यात नाटक लिखे गये हैं जो कला की दृष्टि से बड़े ऊँचे हैं किन्तु मेरी बुद्धि में वे ऊँचे नाटक इसलिये नहीं कहे जा सकते कि वे रंगमंच पर उतरने में शिथिल हैं। वे उतरते नहीं उतारे जाते हैं। उनमें काट-छाँट की जाती है और उनकी मौलिकता बनाये रखने की मौलिक कला काम में लाई जाती है। अभिनय-कला-पटु नाटककार के नाटकों को रंगमंच पर आने के पहले इस आपत्ति का सामना नहीं करना पड़ता। आचार्य सीताराम चतुर्वेदी और आचार्य काश्यप प्रभृति कलाकार इसी कोटि के नाटककार हैं और 'सम्बोधि की छाया में' एक ऐसा ही नाटक है जो रंगमंच की छोटी-छोटी बारीकियों से ओतप्रोत है।

यह नाटक एकांकी है, किन्तु एकांगी नहीं। एक ही अंक में नाटक के अनेक अंगों का समावेश हुआ है और एक से अधिक अंकों के तत्व—(क) ब्राह्मणों, जटिलों एवं बौद्धों का मानसिक संघर्ष, (ख) तिष्य-रक्षिता की देशभक्तिमूलक श्लाघ्य प्रेरणाओं का प्रदर्शन, (ग) रूपकला की यौवन-वृत्तियों का अनावरण, (घ) अशोक की धर्मयात्रा एवं विहार यात्राओं की रहस्यमय निर्देशिकायें, (ङ) विकटबुद्धि एवं सम्राट् की राजतंत्रात्मक नियंत्रण-कला एवं षड्यंत्रों की चक्रव्यूहिकायें, (च) राज-

महल की चारित्रिक एवं परस्पर-विरोधी प्रवृत्तियों का प्रसारण एवं अवरोध····इस प्रकार से एक-दूसरे में आबद्ध हैं कि वे एक अंक के हो गये हैं। इस नाटक की यह मौलिकता मुझे अत्यन्त आकर्षक लगी और ऐसा लगा कि काश्यप जी ने नाट्यकला को एक नया मोड़ दिया है जो श्लाघ्य है।

वर्तमान युग परिवर्तित संस्कृति का संक्रमण-काल है। प्राचीन युग से एक नया युग निकल रहा है। पुरानी बातें एक नये अर्थ एवं संदर्भ में देखी जा रही हैं और संक्रमण में एक नयी आशा का संचार एवं प्रसार हो रहा है। भारत की जनतांत्रिक पृष्ठभूमि में अनेक वादों का समन्वय प्रारम्भ है। राजनीति एवं समाज के विभिन्न मार्गों का एक ऐसा कटरा बन रहा है जो शान्ति एवं निर्माण के पथ को प्रशस्त करने में सहायक है। एक ओर तो जाति-पाँति के प्राचीर ध्वस्त होते जा रहे हैं और दूसरी ओर वर्गवाद की विभीषिकायें मुँह दबाये बढ़ती आ रही हैं। ऐसे काल में, 'सम्बोधि की छाया में' के पात्र एक आदर्श वातावरण उपस्थित करते हैं। काश्यप जी के बौद्ध ब्राह्मण एवं ब्राह्मण बौद्ध का दर्शन यह स्पष्ट कर रहा है कि विचारों की दो परस्पर-विरोधी मान्यतायें एक होकर स्वराष्ट्र की प्रगति एवं उन्नति में सदैव सहायक हो सकती है। विकटबुद्धि ब्राह्मण होते हुए भी बौद्ध होने वाले अशोक की विरोधी ब्राह्मण-शक्ति तिष्यरक्षिता का साथ नहीं देता, किन्तु उसे एकाकी बनाकर स्वदेश के उन्नायक अशोक का सहायक होता है। इस विचार से राष्ट्रभाषा-साहित्य में इस नाटक द्वारा काश्यप जी की देन अद्वितीय है।

समाज में कुछ रूढ़ियाँ एवं परम्परायें ऐसा घर कर गई हैं कि उनके निष्कासन को प्राथमिकता दी जानी चाहिये। नाटक में ऐसे स्थल उत्पन्न किये गये हैं जहाँ इन समस्याओं की ओर कुशल संकेत किया गया है। यह काव्योल्लास परस्पर के संलाप का प्राण है जो अभिनय-कला के चातुर्य से समाज के जटिल मस्तिष्क को परिवर्तित करने में

सहायक होता है। समाज के दुखते सिर को उँगलियों की कड़ी चोट देनी ही होगी। 'हमारे सभी देवता अब्राह्मण हैं', 'मार्ग तो उन जटिलों का भी था जिनके दर्शनार्थ सारे जम्बूद्वीप की जनता लालायित रहती थीं', 'जिस प्रकार देवी असंधिमित्रा ने आप से पूछ लिया था'—आदि व्यंग्य-वाक्य गहरी चोट मारते हैं और वास्तविकता की ओर बर्बस किन्तु स्वाभाविक रूप से ढकेल ले जाते हैं। परिस्थितियों का सामयिक विश्लेषण एवं भूत का समुचित संदर्भ में उचित स्मरण निर्माण का कारण तथा अभद्रताओं के निवारण में चारण बन कर आते हैं।

आचार्य काश्यप मनोविज्ञान के पण्डित हैं। विभिन्न पात्रों की मनःस्थितियों को, प्रत्येक की योग्यता के अनुसार संलाप के माध्यम से, स्पष्ट करने में उन्हें इस नाटक में पर्याप्त सफलता मिली है। घर में चलने वाले षड्यंत्रों का पर्दाफाश केवल विभिन्न समय की मनोदशाओं के अध्ययन में ही सम्भव है। बगल में रहने वाली प्रेयसी अपने पति पर विजय प्राप्त करना चाहती है और वह अशोक के निकटस्थ चालाक ब्राह्मण को 'बोधि-द्रुम के नाश में, राजकुमारों एवं देवीकुमारों की हत्या में, सम्राट् के धर्म-परिवर्तन में, ब्राह्मणवाद के सम्वर्धन आदि में, अपनी ओर खींच लेना चाहती है। तिष्यरक्षिता समझती है कि सम्राट् के विपरीत विकटबुद्धि को खड़ा कराने में उसे सफलता मिल सकती है, उसके ब्राह्मणवाद को प्रोत्साहन एवं समर्थन करने-कराने की जागरूक भावना के सम्बल से और उसकी इस स्थिति से लाभ उठा लेना है। वह चालाक ब्राह्मण विकटबुद्धि महारानी की मनोदशाओं को पढ़ कर ही षड्यंत्रों का पता लगा पाता है। नाटक में ऐसे स्थल अनेक हैं जहाँ ऐसी मनःस्थितियों की रश्मियाँ पाठक में मन और हृदय को चमका देती हैं तथा अभिनय-कला के निखार में सहायक होती हैं।

आचार्य काश्यप ने अनेक नाटक लिखे हैं और उन्होंने उनके माध्यम से देश एवं समाज की अनेक समस्याओं का समाधान किया

है। 'सम्बोधि की छाया में', उनकी नवीन गति है। यह इनका प्रथम ऐतिहासिक नाटक है। अशोक आज हमारे देश का चरित्रनायक है और उसकी राजनीति हमारे देश के नायकों का पथदर्शक है। कौटिल्य के मार्ग पर चलने वाले महामंत्री खल्लतक को विश्राम दिया गया है और अशोक की परिवर्तित राजनीति को संचालित करने के लिये नया अधिकारी राधागुप्त नियुक्त किया गया है। हमारे देश के प्रशासन में इस व्यवस्था का समावेश धीरे-धीरे हो रहा है। सम्राट् दो बार शत्रु के बन्धन खोलता है। उसके ये कृत्य उच्चाधिकारियों को भले नहीं लगते। उनकी असहमतियाँ सामने आती हैं, किन्तु आज की राष्ट्रनीति का संचालक विकटबुद्धि है जो आचार्य कौटिल्य का परिवर्तित संस्करण है। वह सब को रोकता है और सम्राट् की शक्तिशालिनी अहिंसात्मक नीति की सफलता के लिये मार्ग खोलता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि इस नाटक में गांधी-युग और देश की वर्तमान शासन-नीति की महानताओं को बल मिला है। "हमारा सैन्यबल जो पहले था....आज भी है....जबतक सम्पूर्ण मानव समाज में मानवीयता, सदाशयता एवं सच्चे धार्मिक विचारों एवं भावनाओं के आवर्त घर नहीं कर लेते तब-तक लोकमंगल की भावना से प्रेरित सम्राट् को (शासन को) भी सैनिक बल रखना ही होगा।" काश्यप जी की यह विचारधारा भारत के प्रथम प्रधान मन्त्री पण्डित नेहरू एवं बरमा के प्रधान मन्त्री ऊ नू द्वारा प्रचारित पंचशील की सरसता को कोमलतर एवं दृढ़तर बनाती है। हमारी सेना सुरक्षा के लिए और अहिंसा के प्रसार की क्षमता बनाये रखने के लिए है।

'सम्बोधि की छाया में' इतिहास का प्रसिद्ध नायक सम्राट् अशोक भारत के नवीन रंगमंच पर, मैं समझता हूँ, अधिक स्पष्ट एवं मानव बन कर आया है। शेक्सपियर ने अपने ऐतिहासिक नाटकों में घटनाओं के सम्वर्धन, संकुचन एवं परिवर्धन द्वारा प्रधान पात्रों के चरित्र को विशद एवं व्यापक तथा बोधगम्य बनाने के लिये जिन मौलिक

कलात्मक प्रवृत्तियों एवं रचनात्मक बुद्धि का समावेश किया है वे सब यथावत भारतीय वातावरण में इस नाटक में उपलब्ध हैं। मैं काश्यप जी की उनकी इस कला के लिये बधाई देता हूँ। मैं इतिहास का विद्यार्थी रहा हूँ। इतिहासकारों ने अशोक के मत-परिवर्तन का एक मात्र कारण कलिंग देश में उसके द्वारा किया गया रक्तपात बताया है। यह मुझे सर्वथा अस्वाभाविक लगता रहा है। विजेता की यह सब से बड़ी निर्बलता होगी यदि रक्त देखकर वह कोमल हो जाय। काश्यप जी का अशोक जन्मजात मानव है अतः उसमें ऐसी मानवीय क्षमतायें वर्त्तमान हैं जो उसे महान् बनाने में सर्वथा शाश्वत है। कलिंग-विजय में उसकी कठोरता पराश्रित है। वह माँ का आदेश बन कर आयी है। वह उसकी नहीं। असंधिमित्रा उसकी पत्नी है, स्वकीया है। उसने उसे कभी नहीं छोड़ा। छोड़ रखा था केवल अपनी माता के आदेश से। काश्यप का अशोक तुलसी का राम है। मर्यादाओं का पोषक है। धर्मयात्रा के समय जब वह बोधगया से प्रस्थान करता है चाहता है उसकी भिक्षुणी प्रिया उसके साथ रहे। वह कहता है, "मैं किस मुँह से कहूँ ?....मैं तो चाहूँगा कि सभी साथ ही रहें।" शकुन्तला का दुष्यन्त अभिशप्त है। 'मैं किस मुँह से कहूँ' कितना मानवीय है। काश्यप जी के क्रान्तिकारी विचारों में उनकी मर्यादायें एक शिष्ट समाज के निर्माण में सदा सहायक सिद्ध होंगी ! बड़े भाई सुसीम का पुत्र बालपण्डित सम्राट् की अट्टालिकाओं की छाया में काषाय वस्त्र पहन कर भिक्षु की राह चले और चाचा क्या ऐश्वर्य के झूले पर झूलता रहे वह शान्ति का खोजी बन कर तथागत के मार्ग पर न चले ?

मैं इस नाटक का भूमिका-लेखक नहीं, केवल प्रथम पाठक मात्र हूँ। काश्यप जी ने मुझे यह सुअवसर प्रदान कर अपने चिर स्नेह का परिचय दिया है। मैं जब "सम्बोधि की छाया में" पढ़ रहा था गया में था। गया के आस-पास प्राग्बोधि, उरविल्वा, नीलाजन, बोधि-द्रुम,

निग्रोध एवं खल्लतक (बराबर एवं नागार्जुनी) पहाड़ियाँ, पाटलिपुत्र, ऋषिपतन तथा चैत्यगिरि का मूक वातावरण एक सजीव वाणी-विलास कर रहा था जो तथागत एवं प्रियदर्शी अशोक के परिवेश को प्राप्त करने में सर्वथा समर्थ है जो नाटक की सहज अनुभूति है।

देश और विदेश के प्राचीन एवं नवीनतम नाट्य-कला-सम्बन्धी विभिन्न प्रकार के प्रयोगों को देखते हुए मैं निःसंकोच कह सकता हूँ कि इस नाटक द्वारा आचार्य काश्यप ने एक सर्वथा मौलिक लीक खींची है जिस पर वर्तमान एवं भविष्य के नाटककारों को राह मिलेगी। इस कृति के लिए आचार्य काश्यप बधाई के पात्र हैं।

गया : ८ जून, १९५९ —तारकेश्वर उपाध्याय

अपनी बात

ऐतिहासिकी

गया की 'संगीत, नृत्य एवं नाटक अकादमी' की संस्थापना सन् १९५७ में हुई थी और इसके मूल में गया के भूतपूर्व जिलाधीश श्री मेनन का विश्रुत प्रबंधत्व, ललित-कला-संबंधी उत्कट प्रेम एवं अदम्य उत्साह था। उन्होंने चाहा था कि अकादमी बुद्ध-जयंती की २५०० वीं वर्षगांठ पर अशोक महान् के जीवन से संबंधित कोई नाटक अभिनीत करे। उनके चले जाने के उपरान्त उनके उत्तराधिकारी जिलाधीश डा० एफ्० कूटो ने उनके सपनों को साकार रूप देना चाहा। मुझपर नाटक लिखने एवं उसके अभिनय-संबंधी आयोजन का भार सौंपा गया। मैंने "प्रियदर्शी अशोक" नामक एक नाटक लिखा। कतिपय कारणों से, जिनका उल्लेख करना मेरे लिए उचित नहीं है, वह नाटक खेला नहीं जा सका। तत्पश्चात् एक छोटे नाटक के अभिनय की योजना बनी और इस बार भी नाटक के प्रणयन, अभिनय एवं प्रबंध का संपूर्ण दायित्व मुझ पर ही सौंपा गया। गया के कलाकार-बंधुओं के अटूट कला-प्रेम से उत्साहित हो मैंने **"सम्बोधि की छाया में"** लिखा जो **प्रियदर्शी अशोक** के द्वितीय अंक का एक नवीन संस्करण या रूपान्तर मात्र है। यह नाटक बड़ी सरगर्मी के साथ खेला गया और गया के कलाकारों के कलात्मक जीवन में एक विचित्र उत्स का द्योतक सिद्ध हुआ।

अशोक भारतीय इतिहास का एक अत्यन्त प्रबल एवं अभूतपूर्व चरित्र है। इसके जीवन के कतिपय अंगों की ऐतिहासिकता के विषय में कई मतमतान्तर हैं। संस्कृत साहित्य, बौद्ध साहित्य तथा अन्यान्य उत्कीर्ण अभिलेखों में कहीं-कहीं परस्पर-विरोधी बातें पायी जाती हैं, कतिपय किंवदन्तियों एवं आख्यायिकाओं ने तो तथ्यों पर

कुहासा-सा डाल दिया है। इसमें सन्देह नहीं कि अशोक एक ऐतिहासिक चरित्र है, इसमें सन्देह नहीं कि वह अभूतपूर्व ऐतिहासिक सम्राट् होकर रहा, इसमें सन्देह नहीं कि उसकी परिचालित परम्पराएँ आनेवाले युगों के लिए उदाहरण, साहित्य, इतिहास, धर्म एवं अन्य विचारधाराओं के लिए अक्षय संपत्ति बनी रही हैं, --हम अद्यतन अशोक महान् के युग से अपने इतिहास को, अपने अतीत गौरव को, अपनी सभ्यता एवं संस्कृति को पूजार्ह मानते रहे हैं --किं बहुना, स्वतंत्र भारत ने अशोक-नीति को अपनी नीति का प्रतीक माना है और अशोक-चक्र हमारी ध्वजा-पताका को उर्ज्वसित, उल्लसित अप्रतिम, सुललित बनाता हुआ सर्व प्रकार से दिग्दिगन्त को अनिर्वच सन्देश दे रहा है। मैंने इतिहास के आलोक में अशोक महान् अथवा प्रियदर्शी अशोक की कुछ व्यापक समस्याओं को अपने ढंग से पढ़ने का प्रयत्न किया है। संभव है, मेरी कल्पनाएँ कुछ लोगों को चित्र-विचित्र-सी लगें, क्योंकि अबतक के पाठक अशोक को एक खास ढंग से देखते आए हैं। मेरा अशोक है तो ऐतिहासिक अशोक और उभर पड़ा है "प्रियदर्शी अशोक" एवं "सम्बोधि की छाया में" अपने ही रूप में तथा सर्वमान्य बौद्धिक विवेचनों की संगति में, किन्तु उसके पीछे एवं आगे जो चक्र चलते रहे हैं, उन्हें मैंने अपनी कल्पनाओं की तूलिका से एक सर्वथा निराले ढंग से चित्रित कर डाला है। दो एक नवीन कल्पनाएँ निम्न हैं।

अशोक की माता सुभद्रांगी, जैसा कि किंवदन्तियों से विदित होता है, चम्पा के एक ब्राह्मण की पुत्री थी। ज्योतिषियों ने कहा था, 'यह रानी होगी, इसका पुत्र सम्राट् होगा........'। पिता ने पुत्री को महत्वाकांक्षाओं की अग्नि में झोंक दिया। ....सुभद्रांगी सम्राट् बिन्दुसार के अन्तःपुर में प्रवेश पा सकी....। कहा जाता है बिन्दुसार के उपरान्त अशोक ने अपने ९९ भाइयों को तलवार के घाट उतारकर राजसिंहासन प्राप्त किया। मेरा कहना है कि अशोक के आरम्भिक

राजनीतिक जीवन के पीछे राजमाता सुभद्रांगी का ही हाथ था। राजमाता सुभद्रांगी ने ही उत्तराधिकार का युद्ध चलाया, अशोक को रक्त-नद में बहने के लिए उत्प्रेरित किया, उसे एकच्छत्र सम्राट् होने के लिए उद्वेलित किया····। कहने का तात्पर्य यह है कि अशोक की राजनीति में विक्षोभ उत्पन्न करने के पीछे जो शक्ति थी और उसे सर्वाङ्गतः हिला देने के पीछे जो आत्म-उद्वेजनाएँ थीं उन सब के मूल में अशोक की वह दुर्दमनीय वितृष्णामूलक प्रतिक्रिया थी जो राजमाता सुभद्रांगी की कूटनीति एवं प्रबल आग्रहों के फलस्वरूप उत्पन्न हुई थी। अशोक ने अपने को आमूलतः परिवर्तित कर डाला। कलिंग का महान् विजेता सारे संसार पर राजनीतिक राज्य तो न कर सका किन्तु उसने अपनी अपूर्व उदार नीति से एक सार्वभौम विधान का प्रणयन किया जो आज मानव-धर्म के नाम से उद्घोषित किया जा सकता है।

मेरी दूसरी कल्पना है, अशोक की कनिष्ठ रानी तिष्यरक्षिता कलिंग-राज की पुत्री थी, जिसने अपने पिता के देश के नाश, आबाल-वृद्ध नर-नारियों की हत्याओं से विदग्ध हो सारे मौर्य राजपरिवार को अपनी प्रतिहिंसा की अग्नि में जला देना चाहा। तिष्यरक्षिता ने अपनी आँखों से देखा था : कलिंग राजपरिवार के सभी लोग मौर्य सेनानियों के खड्ग की धार उतारे गये···। वह द्वार की आड़ में दुबकी, डरी, सहमी, काँपती पड़ी थी····। यह स्वाभाविक है कि वह राजपुत्री दुर्धर्ष प्रतिहिंसा की अग्नि में जलती और सारे मौर्य परिवार को उसमें भस्म कर देती····। मेरी अन्य कल्पनाएँ भी हैं, जिन्हें मैं पाठकों एवं दर्शकों की सुरुचिपूर्ण दृष्टि पर छोड़ देता हूँ। वे देखें, विकटबुद्धि क्या है, किस धातु का बना है, किन विचारधाराओं का प्रतीक है। क्या वह कौटिल्य का नवीन संस्करण है, या उदारचरित सम्राट् अशोक की सदाशयता, मानवीयता एवं उदार धार्मिक नीति का प्रतीक ? वह कौटिल्य तो नहीं कहा जा सकता और न हम उसे आधुनिक अर्थ में कूटनीतिज्ञ ही कह सकते। वह तो है महान् उदार-

चरित, परम मेधावी, विज्ञ और है सम्राट् अशोक का सखा मात्र। हाँ, वह, सचमुच, एक अभूतपूर्व अशोकोचित व्यक्ति है, जो अशोक के सखा या व्यक्तिगत सचिव के रूप में अशोक के साथ अवश्य रहा होगा, अन्यथा अशोक की शान्ति-नीति से प्रचालित विचारधाराएँ निर्विरोध किसी प्रकार भी इतिहासप्रसिद्ध मान्यता को न प्राप्त हो सकी होतीं।

दो-एक अन्य शब्द। **'सम्बोधि की छाया में'** में कुछ स्थानीय सूचनाएँ ज्ञातव्य हैं। श्रमण महल्लक नामक जटिल साधु की उरविल्वा के आस-पास की परम्पराएँ, ब्राह्मण-धर्म एवं बौद्ध धर्म-संबंधी घात-प्रतिघात आदि-आदि····निस्सन्देह इस ऐतिहासिक नाटिका की अपनी विशेषताएँ सिद्ध होंगी। यह नाटक कैसा बन पड़ा है इसे प्रबुद्ध-नाटक-प्रेमी ही समझें।

अभिनयीय

यह नाटक सर्वप्रथम, गया की **संगीत, नृत्य एवं नाटक अकादमी** के तत्वावधान में बुद्ध-पूजा के पुनीत अवसर पर बोधगया के रंगमंच पर ही फरवरी ४, १९५८ को अभिनीत हुआ था। अकादमी द्वारा प्रकाशित अभिनय एवं रंगमंच-संबंधी परिचयात्मक विवरण (सीनौप्सिस) के कुछ विशिष्ट अवलोकनीय अंश निम्न हैं।

पूर्वाभास : बौद्ध धर्म में प्रविष्ट हो जाने तथा कलिंग-विजय के दो वर्ष उपरान्त अपने राज्याभिषेक के दसवें वर्ष मौर्य सम्राट् प्रियदर्शी अशोक धर्म-यात्रा के सिलसिले में भगवान् तथागत के **सम्बोधि-स्थल** एवं बोधि-द्रुम के दर्शनार्थ आए हुए हैं। सम्राट् ने अपने शुभागमन के काल में यहाँ (बोधगया में) पाषाणवेष्टिनी से आवृत एक बहुत भव्य मन्दिर बनवा दिया है। उसी मन्दिर के दक्षिण पश्चिम कोण में सम्राट्, उनके राजपरिवार तथा अन्य राजपुरुषों के अल्पकालीन आवास, शिविर आदि खड़े हैं।

सम्राट् के साथ उनकी चौथी रानी तिष्यरक्षिता भी है। तिष्यरक्षिता कलिंगराज की पुत्री है। वह प्रतिक्षण प्रतिशोध की अग्नि में जल रही है, क्योंकि अशोक के सैनिकों ने उसके पिता, राजपरिवार तथा अन्य कलिंगवासियों को खड्ग की धार उतार दिया है.........वह बदला लेना चाहती है। एक ओर उसकी दुरभिसन्धियाँ, षड्यन्त्र आदि चल रहे हैं, दूसरी ओर कलिंग-युद्ध से उद्वेलित सम्राट् का विगलित मन भगवान् तथागत की तपोभूमि एवं सम्बोधि की छाया में शान्ति चाहता है। साथ में सम्राट् के धर्मगुरु महास्थविर उपगुप्त, धर्मसखा बालपण्डित निग्रोध, अन्तरंग सखा विकटबुद्धि आदि हैं। विकटबुद्धि की भयंकर प्रतिभा के समक्ष तिष्यरक्षिता की सारी कुचालें एवं षड्यंत्र टिक नहीं पाते। प्रियदर्शी अशोक का उद्दाम स्नेह फूट पड़ता है, जब वे सम्बोधि-स्थल में आटविक विद्रोही वृक्षसेन तथा भयानक षड्यंत्र में पकड़े गए उरविल्वा के महान् तपस्वी श्रमण महल्लक के रूप में कलिंगवासी कुदन्त को वन्दियों के रूप में देखते हैं....महाराज अशोक तथा उनकी मानवीयता का सच्चा दर्शन कीजिए **सम्बोधि की छाया में**.......।

भूमिका	पुरुष	**कलाकार**
सम्राट् अशोक	(बौद्ध मौर्य सम्राट्)	**श्री विष्णुदेव नारायण सिंह**
विकटबुद्धि	(सम्राट् का अन्तरंग)	**श्री बदरीनाथ 'विशाल'**
वृक्षसेन	(आटविकराज)	**श्री विन्देश्वरी सिंह 'विन्दु'**
श्रमण महल्लक	(कलिंगवासी कुदन्त)	**श्री श्यामसुन्दर 'श्याम'**
खल्लतक	(प्रथम प्रधान मन्त्री)	**श्री राजाराम शर्मा**
पुष्यगुप्त	(प्रधान सेनापति)	**श्री रेवतीरमण प्रसाद**
महास्थविर उपगुप्त	(राजगुरु)	**श्री माखनलाल गयापाल**
बालपण्डित निग्रोध	(सम्राट् के धर्मसखा)	**श्री अनिल इन्दवार**
राधागुप्त	(प्रधान मन्त्री)	**श्री अनवारुल हसन**
महेन्द्र	(प्रथम राजकुमार)	**श्री गोविन्द पाण्डेय**

धर्मविवर्धन कुणाल	(द्वितीय राजकुमार)	**श्री कृष्णचन्द्र इन्दवार**
जालौक	(तृतीय राजकुमार)	**श्री राजेश्वर प्रसाद सिंह**
तीवर	(चतुर्थ राजकुमार)	**श्री गुलाम मुहम्मद इर्तजा**
अग्निब्रह्मा	(प्रथम राजजामाता)	**श्री ब्रजकिशोर लाल**
देवपाल	(द्वितीय राजजामाता)	**श्री सैय्यद मुहम्मद उजैर**
महादेव	(ब्राह्मणवादी अनुचर)	**श्री वीरेन्द्र कुमार 'बिक्कू'**
पुनर्वसु	(बौद्ध अनुचर)	**श्री सच्चिदानन्द सिन्हा**

स्त्री

देवी असंन्धिमित्रा	(प्रथम रानी, भिक्षुणी)	**श्रीमती रानी इन्दवार**
तिष्यरक्षिता	(चतुर्थ रानी)	**कुमारी मणि श्रीवास्तव**
अनुराधा	(तिष्यरक्षिता की सहेली)	**श्रीमती मालती तर्वे**
संघमित्रा	(अग्निब्रह्मा की पत्नी)	**श्रीमती एम्० तर्वे**

संगीत-निर्देशन : श्री मैथिली शरण सिन्हा

समवेत गान : श्रीमती मालती तर्वे, सर्वश्री मैथिली, शंकर, राजमोहन, राजकेश्वर, सच्चिदा आदि

वाद्ययन्त्र : सर्वश्री मैथिली, राजकेश्वर, मास्टर जगदीश, रुद्र, पतरस घोष, गफ्फार, राजमोहन आदि

ध्वनि (अन्तर्ध्वनि) : सर्वश्री विष्णुदेव एवं ब्रजकिशोर लाल

संकेतक : सर्वश्री रेवतीरमण प्रसाद, बन्धु बबानिया, श्याम सुन्दर 'श्याम', प्रो० काश्यप आदि

पूर्वाभिनय-प्रबन्धक : सर्वश्री 'श्याम', विन्दु, माखन, राजेश्वर, भगवान

वेशभूषा-निरीक्षक : सर्वश्री बाँकेबिहारी, विष्णुदेव, गुर्जर-बन्धु

रंगमंच-प्रबन्धक : सर्वश्री रामेश्वर प्रसाद तर्वे, बदरीनाथ, ब्रजमोहन अग्रवाल, श्रीमती मालती तर्वे, गुर्जर-बन्धु, इन्दवार एण्ड को०

रंगमंच-निर्देशन : सर्वश्री रेवतीरमण प्रसाद, श्याम एवं इन्दवार

कार्यकर्तागण : सर्वश्री माखन बाबा, गुर्जर (२), नारायण एवं अन्य अज्ञात चंगू-मंगू बन्धुगण ।

स्मरणीय

सम्बोधि की छाया में का अभिनय गया के कलात्मक जीवन में एक विशिष्ट स्थान रखता है। इसमें गया के विशिष्ट अभिनय-कलाकारों ने भाग लिया था। मैं विशेषतः मगध कलाकार समाज के कलाकारों, यथा—सर्वश्री बाँकेबिहारी लाल, बदरी नाथ, श्यामसुन्दर 'श्याम', रेवतीरमण प्रसाद, विष्णुदेव नारायण सिंह, कृष्णचन्द्र इन्दवार, विन्देश्वरी नारायण सिंह 'विन्दु', माखन लाल गंगापाल, राजाराम शर्मा, ब्रजकिशोर लाल आदि का विशेष अनुगृहीत हूँ जिन्होंने कतिपय दुर्धर्ष कठिनाइयों के बावजूद भी डटकर सहयोग दिया था। श्रीमती मालती तर्वे, श्रीमती रानी इन्दवार तथा श्रीमती मणि श्रीवास्तव ने स्त्री-पात्र की भूमिकाएँ जिस श्रेष्ठता के साथ प्रस्तुत कीं वह गया के अभिनय-संबंधी इतिहास का एक अमर अध्याय है। श्री कृष्णचंद्र इन्दवार ने अपने सारे परिवार की कला, कर्मठता सहनशीलता, अदम्य उत्साह, अभिनय एवं रंगमंच-संबंधी अन्य उपादानों से नाटक को सर्वांशतः सफल बनाने में जो योगदान दिया उससे मैं युग-युग के लिए उनका अनुगृहीत हो गया। उपर्युक्त लोगों को किन शब्दों में धन्यवाद दिया जाय मैं समझ नहीं पाता। इस अभिनय-आयोजन में श्री वीरेश्वर नाथ गुर्जर एवं उनके भाइयों ने जो योगदान दिया वह उनकी कलाकारिता, सौजन्य, सदाशयता एवं सुरुचिपूर्णता का द्योतक था। श्री विन्देश्वरी सिंह 'विन्दु' ने डटकर विरोधों का मुकाबला करके मुझे भलीभाँति सहयोग एवं संतोष दिया। एतदर्थ मैं उन्हें तथा उनके अन्य साथियों, यथा सर्वश्री राजेश्वर प्रसाद सिंह, सैयद मुहम्मद उजैर, सच्चिदानंद सिन्हा आदि को धन्यवाद

देना अपना कर्तव्य समझता हूँ। श्री रामेश्वर प्रसाद तर्वे एवं उनकी पत्नी श्रीमती मालती तर्वे ने जो सहयोग एवं प्रबंध-संबंधी दक्षता दिखलायी वह यहाँ के कलाकार-बंधुओं को भलीभाँति ज्ञात है। अकादमी की ओर से और अपनी ओर से मैं इस कलाप्रेमी दंपत्ति को धन्यवाद देता हूँ। मेरे मित्र सर्वश्री बाँके बाबू, श्याम, रेवती, माखन बाबा, विष्णु-देव, इन्दवार, वृजकिशोर, बंधु, बिरजू, राजमोहन, इर्तजा, राजाराम आदि ने मुझे जो सहयोग दिया उसके लिए मैं उन्हीं को बधाई दे रहा हूँ, क्योंकि **सम्बोधि की छाया में** की अभिनय-सफलता का सारा श्रेय एवं आनन्द उन्हीं का रहा है। अन्त में, मैं अकादमी के सभापति जिलाधीश डा० एफ्० कूटो, पी० एचडी०, आई० ए० एस०, एवं श्री रामनन्दन सिंह (मंत्री, बुद्ध-मन्दिर प्रबंध-समिति) को धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने प्रबंध आदि द्वारा अभिनय को सफल बनाने में भरपूर चेष्टा की। एक बार पुनः कलाकार-गुरु श्री बाँकेबिहारी लाल एवं श्री कृष्णचंद्र इन्दवार तथा उनके कलाकार-साथियों को हृदय से धन्यवाद देता हूँ।

'पथ पर' महाकाव्य के यशस्वी महाकवि श्री तारकेश्वर उपध्याय (प्राचार्य, जनता-जनार्दन कालेज, गान्धीनगर, गाजीपुर) ने जिस ढंग से इस नाटिका के विषय में अपने विचार दिए हैं, मैं उसके लिए उन्हें धन्यवाद तो क्या दूँ, हाँ, मैं उनकी प्रशंसा अवश्य करता हूँ। ये मेरे अभिन्न हैं, इनकी बातें कवि की बातें हैं, आलोचक की नहीं।

मेरे कविमित्र आचार्य श्री दुखहरण गिरि (अध्यापक, गौतम बुद्ध हाई स्कूल, जहानाबाद, गया) ने अपनी सुरुचिपूर्ण संवेदना एवं कवि-सुलभ उदारता से इस नाटक के मुद्रण एवं प्रकाशन-संबंधी कार्य में मेरी जो सहायता की है, उसके लिए वे मेरे आशीर्वचन के पात्र हैं।

गया: जून १०, १९५९

—**काश्यप**

सम्बोधि की छाया में

[महाबोधि-प्राङ्गण के दक्षिण-पश्चिम कोण का अधिकांश भाग राजकीय शिविर तथा अन्य छोटे-छोटे शिविरों से घिरा हुआ है। प्रमुख शिविर से कुछ दूरी पर उत्तर-पूर्व की दिशा में बोधि-द्रुम एवं उससे सटे महाबोधि का पश्चिमी भाग दृष्टिगोचर हो रहा है। रह-रह कर घड़ी-घण्टों की ध्वनि कौंध उठती है और सारा वातावरण धार्मिक स्वरों से विक्षुब्ध हो जाता है। नर-नारियों के स्वर भी सुनाई पड़ जाते हैं। प्रमुख शिविर की सजावट राज्य-सभा के समान ही है। वाम भाग में एक धौंसा रखा हुआ है। दो अनुचर हाथ में छोटे-छोटे वस्त्र-खण्ड लिए आसनों को पोछ रहे हैं। सहसा विकटबुद्धि का प्रवेश। अवस्था लगभग ५० वर्ष; हट्टा-कट्टा। घुटे हुए सिर पर बँधी हुई शिखा दाईं ओर लटक कर कान को चूम रही है। उसमें रुद्री बँधी हुई है। गले में रुद्राक्ष की माला। मस्तक पर विभूति की तीन मोटी रेखाएँ हैं। कानों में बालियाँ लटक रही हैं। हाथ में धातु का छोटा कमण्डलु है। लगता है, अभी पूजा करके लौट रहा है।]

विकटबुद्धि : क्यों नहीं, क्यों नहीं, (इधर-उधर देखने लगता है। दोनों अनुचर पास आ जाते हैं) महाराज अभी सो रहे हैं क्या ?

महादेव (पहला अनुचर) : नहीं देवता, वे तो बहुत देर हुई, घूमने चले गए हैं।

पुनर्वसु (दूसरा अनुचर) : अब आ ही रहे होंगे····

महादेव : (झटके-से) चल हट, काम कर, तुझसे कौन पूछता है?···· तो हाँ, देवता····क्या आज्ञा है ? (दूसरा अनुचर--पुनर्वसु--चुपचाप आसनों को सँभालने लगता है।)

विकटबुद्धि : **(पहले अनुचर से)** क्यों जी, तू तो वेद मानता है न? **(पास में जाकर)** ले आचमन, भगवान् भूतनाथ तेरा भला करेंगे ····**(आचमनी से तीन बार जल देता है)**

महादेव : **(विनीत भाव से)**····अब वेदों का युग कहाँ रहा देवता···· **(इधर-उधर देखकर)** सारा उरविल्वा ग्राम अब बौद्ध हो गया है····

विकटबुद्धि : कैसी बातें करता है रे? मैं तो अभी वहीं से आ रहा हूँ। वहाँ बाबा भूतनाथ का मन्दिर है····वहाँ तो बहुत से लोग पूजा-पाठ कर रहे थे····सुजाता के पिता सेनापति का निर्मित शैव मन्दिर बहुत ही भव्य है····

पुनर्वसु : **(पास में आकर)** मैं प्राग्बोधि के पास का रहने वाला हूँ देवता····वहीं पर तो सुजाता का ननिहाल था···· सुजाता देवी थी····जिसके हाथ की खीर तथागत ने खाई····

महादेव : चुप-चुप चल काम कर····चला है····बड़ा बौद्ध बनने····और सुजाता से सम्बन्ध स्थापित करने····।

विकटबुद्धि : क्यों नहीं····क्यों नहीं····तू तो बिगड़ेगा ही····क्या नाम तेरा?

महादेव : **(दूसरे अनुचर से)**····हाँ-हाँ····बोल····अब बोल····अब तेरा भला नहीं····चला है बौद्ध महिमा गाने····

विकटबुद्धि : क्यों नहीं, क्यों नहीं····बड़ा रोबीला है यार तू तो···· **(तनिक भौंहें तानकर)** चुप!····मैंने तेरा नाम पूछा····

महादेव : मेरा नाम? क्षमा हो देवता **(झुक कर प्रणाम करता है)** ··· आप ही मेरे माता-पिता····मेरा नाम देवता, महादेव है।

पुनर्वसु : चला था रोब गाठने! हुँ! नहीं जानता कि अब बौद्धों का ज़माना आ गया है····वेद भगवान् और ब्राह्मणों की

पूजा अब नहीं होगी···हाँ, तो देवता, मेरा नाम पुनर्वसु है····

महादेव : **(उठकर)** यह क्या देवता ? तब तो घोर कलियुग आ गया है····महाबोधि में क्षत्रिय राजकुमार की पूजा हो रही है···· क्या हम लोग क्षत्रिय की पूजा करेंगे ?

विकटबुद्धि : तू तो महामूर्ख है रे ? हमारे सभी देवता अब्राह्मण रहे हैं । कभी किसी क्षत्रिय राजा ने तपस्या की वे इन्द्र हो गए···भगवान् राम क्या थे ? बोल ।

महादेव : **(दूसरे अनुचर से)** क्या थे ? वोल···अब वोल पुनर्वसु····

विकटबुद्धि : **(पहले अनुचर से)**···मैं तुझसे पूछ रहा हूँ···गुरुघण्टाल

महादेव : जी ? आप ठीक कह रहे हैं देवता ?

विकटबुद्धि : दोनों मूर्ख हैं **(ऊपर देख कर)** दया करो नाथ, भूतेश···· इन दोनों का भला हो । **(दोनों अनुचर झुक जाते हैं । दोनों पर दूर से हाथ रख कर)** कल्याणमस्तु····**(सहसा श्रमण महल्लक के रूप में कुदन्त का प्रवेश । अवस्था लगभग ६० वर्ष । जट-जूट; हाथ में कमण्डल एवं चिमटा मृगचर्म धारण किए)**

श्रमण महल्लक : यह क्या हो रहा है पंडित महाराज ? क्या राजा के अनुचरों पर भी····

विकटबुद्धि : **(वैसा ही)** हाँ, कौन ? क्यों नहीं, क्यों नहीं···श्रमण महल्लक····कहिए कैसे आगमन हुआ ? आइए आइए···· बैठिए····श्रमण भगवान्····

महादेव : **(आगे बढ़ कर)** हाँ, महाराज, चलिए आसन पर····

[दोनों आसन ग्रहण कर लेते हैं ।]

विकटबुद्धि : अब तुम लोग बाहर जाओ···भेजो प्रहरी को····

महादेव : अच्छा देवता····**(दूसरे अनुचरसे)** चल रे यहाँ से···**(दोनों**

चले जाते हैं। श्रमण अपना कमण्डलु रख देता है। एक ओर चिमटे पर झुका हुआ है।)

प्रहरी : **(प्रवेश कर)**····जय हो महाराज की····

श्रमण : महाराज को समाचार दो····

प्रहरी : वे तो····

विकटबुद्धि : हाँ····हाँ वे अभी विहार-यात्रा को गए हैं····श्रमण जी।

श्रमण : विहार-यात्रा को? यह क्या ब्राह्मण महाराज? **(उठ पड़ता है)**

विकटबुद्धि : **(मुसकरा कर)** क्या कोई अपराध है?

श्रमण : अपराध की बात करते हैं, ब्राह्मण देवता····यह घोर पापाचार है····

विकटबुद्धि : क्या, साधु जी?

श्रमण : विहार-यात्रा में हिंसा, अनाचार सभी कुछ सम्भव है····अब तो···· मैंने सुना है····महाराज धर्मयात्रा कर रहे हैं····

विकटबुद्धि : प्रहरी, सुनो····इस ओर कौन है?···· **(स्मरण करके)** अरे, हाँ····खैर; तुम जाओ····चैतन्य रहना····समय पर सूचित करना····समझे····

प्रहरी : जो आज्ञा··· **(चला जाता है)**

विकटबुद्धि : **(श्रमण से)** हाँ, तो साधु जी··· क्या आप लोग बलि नहीं करते?

श्रमण : देखिए विकट जी,····आप झगड़ा करने पर तुल जाते हैं···· यह तो अपना-अपना मार्ग है····

विकटबुद्धि : मार्ग तो उन जटिलों का भी था जिनके दर्शनार्थ सारे जम्बूद्वीप की जनता लालायित रहती थी····और एक आप लोगों का मार्ग है····छिः

श्रमण : देखिए विकट जी····अधिक बढ़-बढ़ कर बातें करने से केवल जीभ लम्बी होती है, मन लम्बा नहीं होता····

विकटबुद्धि : क्यों नहीं, क्यों नहीं····लम्बाई की बातें करते हैं, साधु जी····तो····आप की जटाएँ तो लम्बी हैं ही····और उरविल्वा की वन-भूमि आप ऐसों के लिए तो शताब्दियों से एक लम्बा-चौड़ा चरागाह रही है····

श्रमण : क्या तात्पर्य ?

विकटबुद्धि : तात्पर्य ? तात्पर्य तो स्पष्ट है, आप लोगों ने अपनी घटा-टोपी तपस्या से लोगों को खूब वर्गलाया··· यहाँ तक कि शाक्य सिंह गौतम भी यहाँ खिंच आए····किन्तु उन्हें आप लोगों से क्या मिला ? बोलिए····एक महान् निराशा····एक महान् परिताप ही तो ? उनका शरीर ६ वर्षों की कठिन तपस्या से जीर्ण-शीर्ण हो गया····

श्रमण : तभी तो उन्हें सम्बोधि प्राप्त हो सकी, ब्राह्मण देवता ! भले ही उन्होंने मध्यम मार्ग अपनाया····किन्तु यह सूझ उन्हें तपस्या के उपरान्त ही मिली····

विकटबुद्धि : क्यों नहीं, क्यों नहीं····तभी आप जटा बढ़ाए हुए हैं···· श्रमण जी ! लगता है, आप काश्यप-बन्धुओं की भाँति एक-न-एक दिन बौद्ध अवश्य हो जाएँगे····जटा-जूट एवं घास-फूस वालों का अन्त, अन्त में, मुण्डित सिरों में ही होता है ।

श्रमण : जीभ सँभालिए····ब्राह्मण देवता····नहीं तो इस चिमटे से बाहर कर दूँगा····बड़ी बढ़-बढ़कर बातें करते हैं आप····दे दूँगा श्राप, भस्म हो जाइएगा ।

[आँखें लाल कर लेता है और उठ जाता है ।]

विकटबुद्धि : क्यों नहीं, क्यों नहीं (**तीव्रता से उठ कर**) अरे····चलिए

····इसी नीलाजन में कितने बह गए और कितनों की अस्थियाँ रेत पर बिखरी पड़ी हैं··· नहीं आया कोई जटिल जो ब्राह्मणों को अपनी तपस्या की अग्नि में जला सके····

श्रमण : अब आगे कुछ नहीं कहिए····(**चिमटा सँभालता है**)

विकटबुद्धि : नहीं तो आप अपनी तपस्या से मुझे भस्म कर देंगे, यही न ?····(**डपट कर**) नीचा कीजिए अपना चिमटा····

[**धीरे से चिमटा नीचे दबा देता है ।**]

श्रमण : (**नथूने फुला कर**) देखिए विकटबुद्धि जी,····अब आगे कुछ न कहिए····माना आप सम्राट् अशोक के अन्तरंगो में हैं···· किन्तु साधु-संन्यासी किसी से नहीं डरते····

विकटबुद्धि : आप क्यों डरेंगे····क्योंकि आप रानी तिष्यरक्षिता की दुरभिसंधि में सम्मिलित जो हैं····

श्रमण : (**ताव में आकर**)····भस्म कर दूँगा, जला डालूँगा,····(**तीव्र स्वर में**) प्रहरी····

प्रहरी : (**अन्तःपुर द्वार से**) महातपस्वी····

विकटबुद्धि : श्रमण महल्लक को पकड़ कर बन्दी-शिविर में ले जाओ····

श्रमण : प्रहरी····रानी को समाचार दो····(**प्रहरी श्रमण की ओर बढ़ता है**) प्रहरी····रानी से अभी कहो कि····

विकटबुद्धि : (**बाहर के प्रहरी से**) तुम भी आ जाओ····प्रहरी बाँध लो इस पाखण्डी कुदन्त श्रमण महल्लक को और बन्दियों के शिविर में मुँह बाँध कर रख दो, समाचार मिलने पर तुरत लाना होगा ।

[**दोनों प्रहरी श्रमण को कस कर बाँध लेते हैं और ले जाने को उद्यत हैं । विकटबुद्धि विकट मुस्कानों में व्यस्त है ।**]

श्रमण : इस भयानक अपराध का फल पाओगे तुमलोग····(तबतक प्रहरी उसका मुँह भी बाँध देते हैं ।)

विकटबुद्धि : पहले आप बन्दी-शिविर में आराम करने चलें····रात्रि में जगे हैं, मैं अभी आपको रानी तिष्यरक्षिता के समीप बुला भेजूँगा···· घबड़ाए नहीं श्रमण जी, जटिल जी, पाखण्डी जी····कुदन्त जी····प्रहरियो, ले जाओ पीछे के द्वार से, कोई जानने न पाए····ध्यान रहे ।

[दोनों प्रहरी श्रमण को लेकर चले जाते हैं। विकटबुद्धि मस्ती में टहलने लगता है । ऊपर देख कर हाथ जोड़ लेता है ।]

विकटबुद्धि : प्रहरी !

[दोनों ओर से प्रहरी आ जाते हैं ।]

सावधान रहो····और सब ठीक है न ? रानी तिष्यरक्षिता कहाँ हैं ?

पहला प्रहरी : अभी शृंगार-शिविर में हैं ।

विकटबुद्धि : और महाराज ?

दूसरा प्रहरी : अभी घूम कर नहीं आए····

विकटबुद्धि : तुम लोग सावधान रहो····वे दोनो श्रमण को लेकर चले गए न ?

पहला प्रहरी : हाँ, देवता ।

विकटबुद्धि : अच्छा मैं चलता हूँ, पुनः आऊँगा, पहचानने में त्रुटि न करना । सम्राट् कहीं भी जायँ, उनके आस-पास का संरक्षक-जाल शक्तिशाली होना चाहिए····

[विकटबुद्धि प्रहरियों के साथ ही प्रस्थान कर जाता है । रानी तिष्यरक्षिता मदमाती चाल से प्रवेश करती है । खूब बनाव-शृङ्गार । विकसित एवं अर्धविकसित सुमनों से माथ,

वेणी, गला, हाथ, कटि सभी विशिष्ट अंग सजे हुए हैं। पीछे-पीछे उसकी सहेली अनुराधा है। तिष्यरक्षिता की अवस्था लगभग २५ वर्ष। अनुराधा भी रानी के समान ही सुन्दर है]

तिष्यरक्षिता : अनुराधा, तुम मुझे इतना क्यों सजाती हो ?

अनुराधा : क्या कहूँ, रानी, सजाने की बात न कहें, आप''' कलिंग की राजमाता की गोद में '''कलिंग की शस्यश्यामल धरती में'''झरनों के कल-कल निनाद में''' समुद्र की उत्ताल तरंगों में''''आपने जो पाया है, क्या मगध की रूखी-सूखी भूमि उसकी बराबरी कर सकती है ? मैं तो प्रतिदिन उन साधनों की खोज करती रहती हूँ, जिनमें बाँध कर मैं आपके सपनों को साकार देख सकूँ''''

तिष्यरक्षिता : (आगे-आगे बढ़ती हुई) अनुराधा ! इतना न कह जाया करो''''मेरी आग को शान्त करने का प्रयत्न न करो''''मैं प्रतिशोध लेकर रहूँगी''''तुमने माता की, पिता की, नगर वासियों एवं प्रजाजनों की मीठी याद दिला दी है''' कभी कभी मैं साक्षात् देखती हूँ कि किस प्रकार मगध के सेनानी गण राजप्रासाद में प्रवेश कर मेरे परिवार के सभी लोगों को खड्ग की धार उतारते हैं''''और मैं थक्-सी द्वार की आड़ में बेहोश हो गयी हूँ''''अनुराधा ! इन बातों की याद न दिलाया करो''''तुम वही करो जो मैं कहती हूँ''''किन्तु तुम अकेली क्या-क्या करोगी ?

अनुराधा : रानी, मैं चाहती हूँ कि आप मुझे क्षमा कर दें''''अब इस बार सफलता अवश्य मिलेगी''''श्रमण महल्लक के रूप में भैया कुदन्त का षड़यंत्र बेकार नहीं जा सकता''''उन्होंने अपना ऐसा वेश बनाया है कि कोई नहीं कह सकता कि वे उरबिल्वा के महान् तपस्वी श्रमण महल्लक नहीं हैं'''

वास्तविक श्रमण महल्लक तो राजा गय की प्राचीन राज-धानी के एक ऐसे भाग में बन्द हैं, जहाँ वायु भी प्रवेश नहीं कर सकती····

तिष्यरक्षिता : (धीरे-धीरे बढ़ कर आसन पर विराजमान होती हुई) अनुराधा, श्रमण महल्लक के रूप में कुन्दन को पाकर हमारे भाग्य का सितारा कुछ ऊँचा अवश्य हुआ है, किन्तु हमें सदैव सतर्क रहना है····

अनुराधा : क्यों, रानी ? क्या हमारे पीछे कोई षड़यन्त्र····

तिष्यरक्षिता : ऐसी बात नहीं अनुराधा ! (उठ पड़ती है) किन्तु सतर्क रहना तो हमारे लिए परम आवश्यक है····देखा नहीं, पता नहीं, किसकी भयंकर भूल से बोधि-द्रुम को नष्ट करने की मेरी योजना नष्ट-भ्रष्ट हो गयी····मुझे तो भय है कि कहीं सम्राट् को इसका भेद····

अनुराधा : (झटके-से) ऐसी बात न कहें, महारानी····कुदन्त के साथ मैं थी····केवल एक बौद्ध मुँह लटकाए भक्ति-भावना में लिप्त ऊँघ-सा रहा था····

तिष्यरक्षिता : तब ? (आकर बैठ जाती है)

अनुराधा : कुदन्त ने बोधि-द्रुम की जड़ में औषधि रख दी····और हम दोनों चले आए····वह बौद्ध ज्यों-का-त्यों ऊँघता रहा····किसी को भी कोई सूचना न मिल सकी····

तिष्यरक्षिता : और तब भी भेद खुल ही गया····आज महाराज बहुत खिन्न होकर घूमने गए हैं····पता नहीं उनके भीतर क्या चल रहा है ?····मैं तो डर-सी गयी हूँ····किन्तु अनुराधा, तुम मेरी जीवन-संगिनी हो····तुम से क्या छिपी है मेरी अभिलाषाएँ ? क्या मैं अभीतक रानी बन सकी हूँ ?

क्या मैं प्रतिशोध ले सकी हूँ····(आँखें तरेर कर उठती हुई) मैं एक-एक से बदला लूँगी···भयंकर प्रतिशोध···मैं जिस अग्नि में जल रही हूँ···उसमें सारे मगध राजपरिवार को जला कर छोड़ूँगी···(धीरे-धीरे बढ़कर हाथ-पर-हाथ रखती आसन पर बैठ जाती है।)

अनुराधा : हाँ, रानी···सम्राट् की धार्मिकता बढ़ती जा रही है····उन्हें धीरे-धीरे···· अब धर्म-मोह सताता जा रहा है····देख नहीं रही हो कि यह उनकी विहार-यात्रा नहीं, धर्म-यात्रा है···· (व्यंग्यात्मक ढंग से मुसकरा कर) मानो, हम सभी धार्मिक हैं···खैर, हमें उनकी इस मानसिक स्थिति से लाभ उठाना है, यदि विकटबुद्धि हमलोगों के शिकञ्जों में आ जायँ तो हमारी सारी योजना····

तिष्यरक्षिता : (उठकर) अनुराधा ! अनुराधा !! यह तुमने क्या कह दिया ? यदि यह बात हो पाती, तो क्या नहीं हो जाता ! विकटबुद्धि की बुद्धि यदि हमें मिल जाय तो मैं आकाश के ग्रह-उपग्रह नोच ला दूँ····लेकिन क्या यह सम्भव है ? क्या हम उस महा चालाक ब्राह्मण को····

अनुराधा : महारानी···पुरस्कार दीजिए···यह कार्य मैंने कर दिया है····

तिष्यरक्षिता : अनुराधा ! (अपने पार्श्व में सटा लेती है)···(दूर हट-कर) लेकिन यह सब कैसे सम्भव हो सका मेरी भगिनी···· मेरी प्यारी अनुराधा ?

अनुराधा : वैसे ही जिस प्रकार श्रमण महल्लक प्राप्त किए जा सके····

तिष्यरक्षिता : वे तो गयासुर की नगरी में बन्द हैं, हमने तो उनके वेश का····केवल उनके स्वरूप का उपयोग किया है····क्या विकटबुद्धि के साथ भी····

अनुराधा : नहीं, महारानी विकटबुद्धि को पकड़ना, फिर उनकी बुद्धि के अनुरूप किसी अन्य व्यक्ति को प्राप्त करना और पुनः उन्हें सम्राट् के समक्ष भेजना महा कठिन कार्य है····

तिष्यरक्षिता : **(उतावली के साथ)** तब ? तुमने उन्हें किस प्रकार····

अनुराधा : मैंने उन्हें अपनी ओर फोड़ लिया है····मैंने उनकी धार्मिकता जगा दी है····अब वे बौद्ध सम्राट् के सबसे बड़े शत्रु हैं····मैंने उनका ब्राह्मणवाद जगा दिया है····

तिष्यरक्षिता : तुमने तो यह महान् कार्य किया है—मैं तुम्हें क्या दूँ ? लो मेरा सब कुछ तुम्हारा है····समय पर माँग लेना मुझसे

अनुराधा : मैं आप को लेकर क्या करूँगी रानी····आप तो पुरुष नहीं कि आप से विवाह कर सकूँ····

तिष्यरक्षिता : **(हँसती हुई)** अरे पगली, मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि जो कुछ तुम माँगोगी, मैं सदैव देने को सन्नद्ध रहूँगी····

अनुराधा : अच्छा अब मैं चलूँ····श्रमण महल्लक की टोह लेनी है···· वे अभी तक आए नहीं····

तिष्यरक्षिता : हाँ, जाओ····किन्तु शीघ्र ही आना····

[अनुराधा चली जाती है। तिष्यरक्षिता उन्मन टहलती रहती है ।]

प्रहरी : **(प्रवेश कर)** महारानी, इधर राजकुमार धर्मविवर्धन कुणाल आ रहे हैं····आप····?

तिष्यरक्षिता : अच्छा—अच्छा····आने दो····देखना जब तक वे यहाँ रहे कोई भीतर न आने पावे····तुम दूर खड़े रहना मैं तुम्हें पुरस्कार दूँगी····

प्रहरी : जो आज्ञा····**(बाहर चला जाता है। तिष्यरक्षिता अपने शरीर की ओर एक बार देख लेती है और धीरे-से आकर आसन**

ग्रहण कर लेती है। राजकुमार धर्मविवर्धन कुणाल का प्रवेश होता है। अवस्था लगभग २० वर्ष। अतीव सुन्दर··· राजसी वेश···)

तिष्यरक्षिता : आओ राजकुमार····(मुसकराती है) आओ बैठो····

धर्मविवर्धन कुणाल : महारानी माता की जय हो····(झुक जाता है)

तिष्यरक्षिता : (उठकर) माता नहीं, कुणाल, रानी····

कुणाल : माता जी, आज सम्बोधि-द्रुम की पूजा होने जा रही है···· चलिए न आप भी····पता नहीं क्यों····अभी तक आप में बौद्धधर्म के प्रति अनुराग····उत्पन्न नहीं हुआ?

तिष्यरक्षिता : अनुराग! हाँ, कुमार····तुमने क्या कहा? अनुराग! कुमार, मेरा शरीर, मेरा मन, मेरी सारी अभिलाषाएँ, मेरा सारा जीवन अनुराग चाहता है····वैसा ही जैसा कि प्रातः एवं सायं देखा जाता है खिलना और अस्त होना, पुनः खिलना और अस्त हो जाना और इसी प्रकार चलते जाना।····कुमार····जब मैं तुम्हारी कुणाल-सी आँखें देखती हूँ····तो खो जाती हूँ अनन्त अनुराग के पलों में····लगता है····मुझे परम सुख····निर्वाण-पद या ब्रह्मानन्द मिल चुका है····

कुणाल : हाँ, माँ····मुझे आपका परम स्नेह मिल पाया है····यह मेरा बड़ा भाग्य है····बड़े भाग्य एवं तपस्या के उपरान्त विमाता का ऐसा स्वच्छ अनुराग मिलता है माँ····

तिष्यरक्षिता : कुणाल! कुणाल!! मुझे समझो कुणाल!!
(धीरे-धीरे पास में चली जाती है)····देखो, क्या मैं तुम्हारी माँ होने के योग्य हूँ····क्या मुझ में····
[आँखों में प्रेम का नर्तन उपस्थित करती है]

कुणाल : माता ! आप दूर हटिए····आप····(**दूर हट जाता है**)

तिष्यरक्षिता : नहीं, मेरे प्राणों के सलज राजकुमार, मेरी मांसल अभिकांक्षाओं की सजीव मूर्ति, मेरी आँखों के कमल····तुम मेरे हृदय में हो····मेरे सुख की, मेरी साधनाओं की साकार प्रतिमा····मेरे अनुराग के प्रत्यक्ष देव····(**और पास चली आती है**)

कुणाल : माँ ! माँ !! (**रुक कर····सोचता-सा**) आप सम्भवतः मेरी परीक्षा ले रही हैं····माँ····(**पुनः रुक कर**) क्या आप उन्मत्त हैं ? क्या आपे में नहीं हैं माँ ?····

तिष्यरक्षिता : क्या माँ-माँ की अशोभन रट लगा रखी है ? मेरे हृदेव ! तुम मुझे कोसो, तुम मुझे बुरा-भला कहो····तुम चाहे जो कुछ कहो, किन्तु····अनुराग-दान अवश्य दो····मेरे प्रेम को न ठुकराओ····मैं जब से पाटलिपुत्र आयी हूँ····तुम्हें खोजती रही हूँ····आज लगभग दो वर्ष हो गए कलिंग से आए हुए····आज ही तो पा सकी हूँ अपने कक्ष में मैं अपने राजकुमार को····(**बढ़ कर हाथ पकड़ लेती है**)

कुणाल : (**हाथ झटक कर**) पापिनी····दूर हट····(**जीभ पकड़ कर**)···· क्षमा कीजिए माँ····मैंने दुर्वचन निकाल दिया····उफ्···· (**माथा पकड़ लेता है**)

तिष्यरक्षिता : (**कुछ सँभल कर**) सँभल आओ; राजकुमार····मैं प्रार्थना करती हूँ····अनुनय-विनय करती हूँ····इस प्रकार न ठुकराओ मुझे····

कुणाल : माता जी क्षमा करें····यह तो आप माता हैं, यदि किसी दूसरी नारी ने ऐसा अनैतिक प्रस्ताव मेरे सामने रखा होता तो मैं उसकी जीभ तत्क्षण खींच लेता····किन्तु नहीं····आप मेरी माता हैं····मैं आज से आपके समक्ष कभी न आऊँगा

····और विश्वास दिलाता हूँ माँ कि मैं आपके इस असद् व्यवहार की चर्चा भी कभी न करूँगा ।

तिष्यरक्षिता : मैं यह सब कुछ भी नहीं जानती,····यही जानती हूँ कि (**उबल कर नागिन-सी**) मैं निराश एवं भग्नाश नारी हूँ···· मैं प्रतिशोध लेकर रहूँगी··· मैं आज ही महाराज से कहूँगी कि राजकुमार कुणाल ने मेरी ओर कुदृष्टि फेरी है····

कुणाल : माता जी ···यह क्या कह रही हैं आप ? हे भगवान्, मैंने कौन-सा अपराध किया था उस जन्म में कि ऐसा भयंकर परिताप दे रहे हो ? ····खैर माँ··· मैं सबकुछ सहन कर लूँगा—आप लें प्रतिशोध····मैं शान्त रूप से सबकुछ सह लूँगा····अच्छा माँ प्रणाम, अन्तिम प्रणाम । (**प्रणाम करने को तिष्यरक्षिता की ओर बढ़ता है, किन्तु तिष्यरक्षिता दूर चली जाती है**)

तिष्यरक्षिता : दूर हट जाओ····मेरे शत्रु····मैं जलूँगी···किन्तु उसी अग्नि में तुम्हें भी जलाकर छोड़ूँगी····

कुणाल : अच्छा, माँ···· यह भी माँ का स्नेह ही समझूँगा···· (**चला जाता है। तिष्यरक्षिता नागिन-सी उसकी ओर देखती रह जाती है। उठकर झटके से धौंसा बजा देती है।**)

प्रहरी : (**प्रवेश कर**) आज्ञा महारानी···

तिष्यरक्षिता : क्या समाचार है ?

प्रहरी : बाहर विकटबुद्धि खड़े आपकी आज्ञा की प्रतीक्षा कर रहे हैं ।

तिष्यरक्षिता : (**उठकर उद्विग्नता प्रकट करती है।**)
क्या राजकुमार से उनसे भेंट हुई है ।

प्रहरी : प्रणाम-आशीर्वाद हुआ है और कुछ नहीं····

तिष्यरक्षिता : भेजो उन्हें, किन्तु ध्यान रहे, कोई यहाँ आ न सके बिना

मेरी आज्ञा के····

प्रहरी : यदि सम्राट् आवें तो महारानी ?

तिष्यरक्षिता : समाचार दे देना····जाओ····

[प्रहरी चला जाता है। तिष्यरक्षिता उठती है और सँभल कर बैठ जाती है। मुद्राओं में परिवर्तन लाने का प्रयास करती है]

विकटबुद्धि : क्या आज्ञा है देवी ? **(ध्यान से देखता है)**

तिष्यरक्षिता : आइए ब्राह्मण देवता, आसन ग्रहण कीजिए····आप का तो दर्शन ही दुर्लभ हो गया है··· बोधिद्रुम की पूजा में इतने संलग्न हो गए हैं कि····अपना वास्तविक धर्म-कर्म भूल बैठे हैं ?

विकटबुद्धि : क्यों नहीं, क्यों नहीं, देवी, अब तो आप कहेंगी ही···· मैं हूँ ब्राह्मण, महारानी जी····मैं अपने वैदिक धर्म को क्यों छोड़ने लगा ?····सम्राट् का तो मन ही दूसरा हो गया है····अब मैं आप लोगों का साथ छोड़ देना चाहता हूँ····अब तो न वह पुराना जमाना है और न वे समाट् रहे····अबतो पूजा-पाठ में लीन रहने वाले सम्राट् के पास मेरा जीवन नहीं चल सकता····मैं शीघ्र ही संन्यास धारण करूँगा····

तिष्यरक्षिता : **(मुसकराती हुई)** किन्तु ब्राह्मणी का क्या होगा ?

विकटबुद्धि : **(बैठता हुआ)** उसका कोई भरोसा नहीं, कौन जाने वह भी भिक्षुणी हो जाय। रानी जी, आज मैंने जो दृश्य देखा है, उसे देख कर काँप गया हूँ।

तिष्यरक्षिता : कौन-सा दृश्य, ब्राह्मण भगवान ? कुछ कहिए तो····
(घबड़ा कर उठ जाती है)

विकटबुद्धि : देखिए संयोग की बातें····होनी इसी को कहते हैं····सम्राट् की प्रथम महारानी देवी असंधिमित्रा भी आज यहाँ विराजमान हैं····वे धर्मयात्रा को निकली थीं····(**तिष्यरक्षिता प्रकृतिस्थ हो बैठ जाती है**) सम्राट् की सम्बोधि-यात्रा में उनका पहुँच जाना क्या संयोग की बात नहीं है, रानी जी ?

तिष्यरक्षिता : (**भ्रमित उठकर**) हैं ? ऐसी बात ?

विकटबुद्धि : जब सम्राट् की रानी भिक्षुणी हो सकती हैं, तो मुझ दरिद्र ब्राह्मण की पत्नी का भिक्षुणी हो जाना बहुत ही सरल है····

तिष्यरक्षिता : लेकिन देवी असंधिमित्रा बौद्ध भिक्षुणी क्यों हुई ?

विकटबुद्धि : यह एक लम्बी कहानी है रानी····आप इतना ही समझ लें कि सम्राट् की माता राजमाता सुभद्रांगी ने उन्हें पाटलिपुत्र नहीं आने दिया····

तिष्यरक्षिता : क्यों ?

विकटबुद्धि : बात यह थी कि देवी असंधिमित्रा वैश्य कुल में उत्पन्न हुई थीं····ब्राह्मणपुत्री सुभद्रांगी वैश्यपुत्री देवी असंधिमित्रा को सम्राट् की पटरानी के रूप में कभी भी ग्रहण नहीं कर सकती थीं····हठात् निराश होकर देवी ने बौद्ध धर्म ग्रहण कर लिया····अब वे भिक्षुणी हैं····अपनी प्यारी संतान राजकुमार महेन्द्र एवं संघमित्रा को आज कई वर्षों के उपरान्त देवी असंधिमित्रा देख सकेंगी····

तिष्यरक्षिता : लगता है, राजकुमार महेन्द्र एवं संघमित्रा का झुकाव बौद्ध धर्म की ओर है····

विकटबुद्धि : यह स्वाभाविक ही है····जो न हो जाय रानी जी, खैर, हटाइये इन बातों को····बोलिए अपनी आज्ञा····आपने

मुझ अकिञ्चन को क्यों बुला भेजा है ?

तिष्यरक्षिता : आप को मैं क्या आज्ञा दे सकती हूँ ब्राह्मण-भगवान् ! इस प्रकार लजवाइए नहीं····मैं केवल आप से सहायता की याचना मात्र कर सकती हूँ····आप देख रहे हैं कि सारा राजपरिवार बौद्ध धर्म की ओर झुका हुआ है····क्या इस प्रकार हमारी प्राचीन धार्मिक संस्कृति का ह्रास नहीं हो जायगा ? आज ऋषियों एवं मुनियों की बातें झूठ एवं अनर्गल सिद्ध की जा रही हैं, वेदों, सूत्रों, उपनिषदों को चतुर्दिक गालियाँ दी जा रही हैं, क्या यह अशोभन नहीं है ? मैं जानना चाहती हूँ कि आप यह सब कैसे सहन कर रहे हैं ? आप तो ब्राह्मणवादी हैं न ब्राह्मण देवता ?

विकटबुद्धि : मैं कर ही क्या सकता हूँ ? राजमाता सुभद्रांगी की कटु नीति ने सम्राट् के मन में भारी परिवर्तन ला दिया है। राजमाता ने उत्तराधिकार के युद्ध में सम्राट् के अन्य ९९ भाइयों की हत्या कराके तथा दिग्विजय की लालसा से कलिंग-युद्ध में लाखों लाख को मृत्यु-मुख में डलवा कर सम्राट् के मानुषिक हृदय को हिला दिया है····यदि कोई प्रतिक्रिया सम्भव थी तो वही जो आज सम्राट् कर रहे हैं। उद्वेलित मन को, सम्राट् ने, बौद्ध धर्म ग्रहण करके शान्त करने का प्रयत्न किया है····

तिष्यरक्षिता : किन्तु मैं क्या करूँ, ब्राह्मण देवता ? आप से मेरे मन की बातें छिपी नहीं हैं····मेरी प्यारी सहेली अनुराधा ने तो आप से सबकुछ कह ही दिया होगा देवता····आप ने देखा है अपनी आँखों से कि मेरे पिता का राजपरिवार किस प्रकार नष्ट किया गया····किस प्रकार महाविजयी महाराज खारवेल की सन्तान मेरे पिता का राजपरिवार नष्ट किया

गया····किस प्रकार कलिङ्ग की लक्ष्मी मौर्य सेनानियों के पैरों तले कुचली गयी····और मैं किस प्रकार वेश परिवर्तित कर भयानक से भयानक आपत्तियों, विपत्तियों एवं कंटकाकीर्ण मार्गों की उलझनों को पार करती उतनी दूर पाटलिपुत्र पहुँची····आप यह भी जानते हैं कि मैं किस प्रकार अन्तःपुर में प्रवेश पा सकी····सम्राट् ने मुझपर कृपा की है (**दाँत पीसकर**) मैं ऐसी कृपा नहीं चाहती····नारी कृपा नहीं चाहती····नारी अपना वास्तविक मूल्य चाहती है····मैं जानती हूँ कि मेरा वास्तविक मूल्य करना सम्राट् से सम्भव नहीं है। मैं प्रतिक्षण प्रतिशोध की अग्नि में जला करती हूँ····। मैं आपकी सहायता चाहती हूँ····

विकटबुद्धि : (**उठ कर**) तो मैं तैयार हूँ रानी····अभी तक आपने क्या-क्या किया है?····क्या मैं जान सकता हूँ?

तिष्यरक्षिता : अभी-अभी कुणाल को अपनी प्रतिशोध-अग्नि की प्रथम आहुति बना डाला है····

विकटबुद्धि : कैसे महारानी? (**कुछ आगे बढ़ जाता है**)

तिष्यरक्षिता : यह मैं बता दूँगी आपको किन्तु अभी नहीं खैर, यही समझिए कि मैंने अपना कार्य आरम्भ कर दिया है।

विकटबुद्धि : तो, मैं किस रूप में आप की सहायता कर सकता हूँ महारानी?

तिष्यरक्षिता : बोधि-द्रुम के नाश में, राजकुमारों एवं देवीकुमारों की हत्या में, सम्राट् के धर्म-परिवर्तन में····ब्राह्मणवाद के सम्बर्धन आदि में····

विकटबुद्धि : आप तो षड़यंत्रों का हिमालय खड़ा करना चाहती हैं! क्या यह सम्भव है रानी जी?

तिष्यरक्षिता : आप की सहायता से मैं आकाश से तारे तोड़ ला सकती हूँ····बस आप की सहायता चाहिए····यदि हो सके तो आप श्रमण महल्लक से भी आज मिल लें····कहिए तो मैं उन्हें बुलवाऊँ····

विकटबुद्धि : **(कुछ सोचता-सा)** क्यों नहीं····क्यों नहीं, ऐं ? किन्तु महारानी····अभी शीघ्रता नहीं करनी चाहिए····भारी कार्य के लिए भारी चिन्तन की आवश्यकता होती है····और···· महारानी····बात यह है कि अभी थोड़ी देर में बोधि-द्रुम की पूजा आरम्भ होगी····सम्राट् और अन्य लोग व्यस्त रहेंगे····मेरा भी वहाँ रहना····आवश्यक माना जायगा।····

तिष्यरक्षिता : किन्तु आप तो बौद्ध नहीं ?

विकटबुद्धि : क्यों नहीं·· क्यों नहीं, ऐं ? मैं····और बौद्ध ? यह कैसे सम्भव है महारानी····खैर, माना मैं बौद्ध नहीं हूँ···· ठीक है, किन्तु ऐसे समय में अनुपस्थित रहकर व्यर्थ में संदेह का संकेत क्यों बनूँ ? मैं तो कहूँगा कि आप भी वहाँ चलें और अपने घोर पाप का प्रायश्चित भी कर लें····

तिष्यरक्षिता : घोर पाप ? मैंने कौन-सा पाप किया है देवता ?

विकटबुद्धि : आपने····कह दूँ····आपने बोधि-द्रुम जलाने का प्रयत्न किया है····आप ने श्रमण महल्लक को बन्दी करके उनके वेश में दूसरे व्यक्ति को····कलिंगवासी कुदन्त को, अपने पास रखा है, जिससे कि महान् तपस्वी एवं प्रभावशाली, उरविल्वा की सम्बोधि से लेकर पाटलिपुत्र तक प्रखर ज्योति रखनेवाले श्रमण महल्लक के प्रभाव में रहने वाले साधु-संन्यासी एवं व्यक्ति आपकी दुरभिसंधि में धार्मिक सहायता भी कर सकें····आपने राजकुमार धर्मविवर्धन कुणाल पर सम्मोहन····मन्त्र भी फेंका है····और तो और आपने मुझे

भी पथभ्रष्ट करने का विफल प्रयत्न किया है····धन्य हैं आप रानी जी····किन्तु ध्यान रहे, मैं किसी अन्य धातु का बना हूँ·······मुझसे कोई प्रतिशोध नहीं ले सकता····मैं चैतन्य किये दे रहा हूँ रानी जी, कि आप की दुरभिसंधि कभी भी सफल नहीं होगी····इस समय आप सर्वथा अकेली हैं, आपकी सहेली अनुराधा बन्दी है····जो अनुराधा आपसे बातें कर रही थी, वह मेरा अपना अन्तरंग····एक नव युवक है····आपका कुदन्त श्रमण महल्लक····मेरा बन्दी हो चुका है····

तिष्यरक्षिता : **(तेजी से उठकर एक प्रकार से दौड़ती हुई-सी)** हे भगवान ! यह क्या ? अब मैं समाप्त हो गयी **(थक-सी खड़ी रह जाती है)**

विकटबुद्धि : ठीक रानी····लेकिन एक बात स्मरण रखिए····मैं ब्राह्मण हूँ····क्षमा करना जानता हूँ····यदि आप प्रतिश्रुत हों और वचन दें कि आप मौर्यकुल की मर्यादा के भीतर रहकर सम्राट् की सेवा में लगी रहेंगी तो आप का कुछ न बिगड़ेगा····सम्राट् को सबकुछ ज्ञात है····वे कलिंग के प्रति बड़े दयालु हो उठे हैं, वे आप को कभी न दण्डित करेंगे····किन्तु सदैव सतर्क रहेंगे····

तिष्यरक्षिता : **(आगे बढ़कर आसन पर गिर-सी जाती है)** मेरी रक्षा····ब्राह्मण देवता····मैं सब भाँति पराजित हो गयी ····मैं प्रतिवचन देती हूँ····

विकटबुद्धि : तथास्तु····प्रहरी ? **(प्रहरी के प्रवेश करने पर)** रानी को सँभाल कर भीतर ले जाओ····

[तिष्यरक्षिता उठती है और धीरे-धीरे भीतर चली जाती है। सहसा बाहर से प्रहरी का प्रवेश होता है]

प्रहरी : प्रधान मंत्री एवं प्रधान सेनापति उपस्थित हैं !

विकटबुद्धि : शीघ्र ले आओ।

प्रहरी : जो आज्ञा····(चला जाता है)

[विकटबुद्धि उठकर अपने को प्रकृतिस्थ करने का प्रयत्न करता है। प्रधान मंत्री खल्लतक एवं प्रधान सेनापति पुष्यगुप्त का प्रवेश। प्रधान मंत्री की अवस्था लगभग ७० वर्ष तथा प्रधान सेनापति की अवस्था लगभग ५० वर्ष। दोनों राजकीय वेश में हैं]

विकटबुद्धि : आइए प्रधान मंत्री एवं प्रधान सेनापति जी, पधारिए सम्राट् अभी घूम कर नहीं लौटे····बैठ जाइए (दोनों यथास्थान बैठ जाते हैं) कहिए क्या समाचार है ?

प्रधान मंत्री खल्लतक : श्रीमान् ब्राह्मण देवता····सब आप की कृपा से आनन्द ही आनन्द है। पाटलिपुत्र से अभी पहुँच रहा हूँ····यह तो आप को विदित ही है····सम्राट् ने बुला भेजा है····

विकटबुद्धि : हाँ, प्रधान मंत्री, आपकी महती कृपा से सम्राट् निर्द्वन्द्व धर्म-यात्रा कर रहे हैं····वे आप को पुरस्कृत कर अब अवकाश देना चाहते हैं····

खल्लतक : बड़ी कृपा होगी····अब मैं बूढ़ा हो चला···· आचार्य कौटिल्य के राजधर्म एवं सम्राट् अशोक के राजधर्म में आकाश-पाताल का अन्तर है····अब तक मैं प्राचीन परिपाटी में बँधा रहा····राजमाता की नीति के साथ पद मिलाता इस अवस्था को प्राप्त हो गया····मौर्य की राजनीति में गहरे परिवर्तन होने जा रहे हैं, हो सकता है, मेरा बूढ़ा कंधा उन्हें सँभाल न सके····अच्छा है, सम्राट् आज की शुभ घड़ियों में मुझे मुक्त कर दें····

विकटबुद्धि : आप सम्भवतः नहीं जानते कि सम्राट् के हृदय में आप के लिए क्या और कितना बड़ा स्थान है····वे आप को मौर्य-शासन की रीढ़ समझते रहे हैं····प्रधान सेनापति अपने सैन्य-बल, चातुरी एवं सन्नद्धता से साम्राज्य को अक्षुण्ण रखते हैं, किन्तु प्रधान मंत्री अपने कुशल शासन एवं नीति से प्रजा को प्रसन्न रखते हैं और राजकुल की लक्ष्मी को उन्नत एवं श्रद्धास्पद बनाते हैं।

प्रधान सेनापति पुष्यगुप्त : आपके इन शुभ शब्दों को सुनकर मन बहुत ही प्रसन्न हुआ है ब्राह्मण देवता····हम लोग आप को क्या कहें ? आप तो सम्राट् अशोक के साम्राज्य के पुष्ट स्तम्भों की भित्ति हैं। आप हिले, स्तम्भ हिले और हिल उठा साम्राज्य, आप स्थिर हैं, स्तम्भ स्थिर हैं और स्थिर हैं साम्राज्य की जड़ें····आप ऐसे सलाहकार एवं विद्वान् राजनीतिज्ञ खोजने से मिलते हैं····आप तो राज-धर्म के साक्षात् अवतार हैं····

विकटबुद्धि : अपनी विशेषताओं को मुझ पर न लादें प्रधान सेनापति जी····मैं कुछ नहीं हूँ····मैं तो सम्राट् का एक क्षुद्र सेवक हूँ····खैर, बोलिए आटविक राज्यों के विद्रोह अभी शान्त हुए कि नहीं ?

पुष्यगुप्त : शान्त ही हैं, मैं तो एक राज्य के राजा को वन्दी बनाकर ले आया हूँ····आज्ञा हो तो ले आऊँ····बड़ा बहादुर है वह !

विकटबुद्धि : अच्छा ! मैं अवश्य देखूँगा····आप जाइए····ले आइए ····तब तक सम्राट् भी आ ही जाते हैं। प्रधान मंत्री जी, आप भी जाइए, आराम कीजिए····हाँ प्रधान सेनापति जी, क्या आर्य अग्निब्रह्मा, आर्य देवपाल आदि भी आ गए ?

पुष्यगुप्त : हाँ, वे लोग आ ही रहे होंगे····

विकटबुद्धि : अच्छा····अब आप लोग जायँ और आराम करें—सम्राट् के आते ही मैं समाचार भेजूँगा····क्षमा करें प्रधान मंत्री जी, आपकी अनुपस्थिति में कभी-कभी मुझे आप का उत्तरदायित्व भी सँभालना पड़ता है।

खल्लतक : कोई बात नहीं, मैं तो अब बूढ़ा हो चला····अब तो मौर्य साम्राज्य की रक्षा का भार आप ही ऐसे लोगों के पुष्ट कंधों पर है····(**प्रधान मंत्री और प्रधान सेनापति उठ पड़ते हैं।**)

विकटबुद्धि : (**उठकर**) आप लोगों का आशीर्वाद चाहिए और कुछ नहीं····खैर····फिर बातें होती रहेंगी, अब आप लोग आराम करें····

[**दोनों चले जाते हैं। विकटबुद्धि अकेला टहलता कुछ सोचता रहता है**]

प्रहरी : (**सहसा प्रवेश कर**) राजकुमार जालौक, तीवर और जामाता अग्निब्रह्मा एवं देवपाल उपस्थित हैं। आर्य अग्निब्रह्मा और आर्य देवपाल के हाथों तथा मस्तक पर पट्टियाँ बँधी हैं।

विकटबुद्धि : शीघ्र भेजो उन्हें, क्या प्रधान मंत्री चले गए?

प्रहरी : बाहर उन्हीं लोगों से बातें कर रहे हैं।

विकटबुद्धि : उनसे भी लौट आने के लिए मेरी प्रार्थना कह देना····

प्रहरी : जो आज्ञा (**चला जाता है। विकटबुद्धि अगवानी के लिए द्वार तक पहुँच जाता है।**)

विकटबुद्धि : आइए, चले आइए, राजकुमारो और राजजामाताओ, क्षमा कीजिए प्रधान मंत्री जी, इनके साथ थोड़ी देर तक आप बातें कर लें (**राजकुमार जालौक, तीवर, अग्निब्रह्मा, देवपाल का प्रवेश। सभी नवयुवक हैं। अग्निब्रह्मा एवं**

देवपाल सम्राट् के दामाद हैं। दोनों के मस्तक पर पट्टियाँ बँधी हैं)

खल्लतक : अवश्य····अवश्य····मैं कोई थका-माँदा थोड़ा ही हूँ····यह तो मेरा प्यारा कर्तव्य है····**(सब लोग यथास्थान बैठ जाते हैं)**

खल्लतक : कहिए राजकुमार जालौक और राजकुमार तीवर, कहाँ से आना हो रहा है, इस समय ?

जालौक : प्रधान मंत्री जी, मुझे और भाई तीवर को सम्राट् ने पाटलिपुत्र और इस स्थान के बीच, यहाँ से लगभग चार-पाँच कोस की दूरी पर भेजा था, वहाँ की पर्वतमालाओं को देखने के लिए····दो पर्वतमालाएँ उच्च एवं दिव्य हैं····

तीवर : प्रधान मंत्री जी, मेरा तो विचार है कि सम्राट् वहाँ पर साधु-संन्यासियों, श्रमणों, आजीविकों एवं बौद्धों में किसी के लिए दरीगृह बनवा दें····बड़ा ही रम्य स्थल है।

जालौक : क्या कहूँ, प्रधान मंत्री जी, यदि सम्राट् ने पशु-हनन के विरुद्ध अपना प्रज्ञापन न निकाला होता, तो मैं यहाँ के सभी लोगों के लिए हिरण मार लाता।

विकटबुद्धि : क्यों नहीं, क्यों नहीं····लगता है, राजकुमार जालौक का झुकाव बौद्ध धर्म की ओर नहीं है।

तीवर : हाँ, ब्राह्मण देवता, मार्ग भर हम दोनों में यही वाद-विवाद चल रहा था।

विकटबुद्धि : तो इसका तात्पर्य यह है कि आप बौद्ध धर्म की ओर झुके हुए हैं, क्यों ?

तीवर : अवश्य····यह राजधर्म है।

खल्लतक : यह कैसे राजकुमार ? यदि यह सत्य है तो हम सभी को बौद्ध हो जाना चाहिए।

तीवर : अवश्य !

विकटबुद्धि : असम्भव ! इसका तात्पर्य यह है कि आप लोगों ने अभी तक सम्राट् को समझा नहीं।

तीवर : इनमें समझने एवं न समझने का कौन-सा झमेला लटका हुआ है···क्या सम्राट् बौद्ध नहीं हैं ? क्या सम्राट् जीव-हिंसा नहीं बन्द कर रहे हैं ?

अग्निब्रह्मा : यह मैं कैसे मानूँ, जब मैं और भाई आर्य देवपाल विन्ध्य की पहाड़ियों से अभी युद्ध के ताजे घाव लेकर चले आ रहे हैं ? हमें युद्ध करने को किसने भेजा था ? भाई तीवर, देखिए, भाई आर्य देवपाल के माथे की पट्टी···क्या यह साज-श्रृंगार का कोई नया साधन···या प्रतीक है ?

देवपाल : यह विषाक्त बाणों का घाव है तीवर भाई ! विष निकालकर औषधि भर दी गयी है···वृत्रसेन के बाण बड़े तीखे थे भाई, जालौक !

विकटबुद्धि : अब बोलिए, राजकुमार तीवर···क्या आर्य अग्निब्रह्मा और आर्य देवपाल विन्ध्य की पर्वतमालाओं पर धर्मयात्रा करने गए थे ? **(सब लोग ईषत् मुसकरा देते हैं)**

खल्लतक : राजकुमारों से मैं एक बात स्पष्ट कह देना चाहता हूँ···राजा की प्रजारंजन नीति, लोक-मंगल की भावना, नैतिक उच्च विचार, महाशयता से सम्बन्धित जो मान्यताएँ हैं, उनमें किसी का भी कोई विरोध नहीं हो सकता···वे सब तो उनकी सार्वभौम चेतना के प्रतीक हैं, किन्तु यदि साम्राज्य के किसी कोने में कोई विद्रोह या उपद्रव होगा या कहीं किसी प्रकार की अशान्ति के चिह्न दृष्टिगोचर होंगे तो वहीं सम्राट् की आज्ञा होगी "मौर्य सेना कूच करे,

आततायियों का नाश करो, धर्म-भावना के विकास के रोड़ों को उखाड़ फेंको····"। माना कि सम्राट् ने दिग्विजय के स्थान पर धर्म-विजय एवं भेरी-घोष के स्थान पर धर्म-घोष का उद्घोष किया है, किन्तु इसका तात्पर्य या प्रतिफल यह तो नहीं कि आज मौर्य साम्राज्य में सेना नहीं है !···· हमारा सैन्य-बल जो पहले था····आज भी है··· जब तक सम्पूर्ण मानव समाज में मानवीयता, सदाशयता एवं सच्चे धार्मिक विचारों एवं भावनाओं के आवर्त घर नहीं कर लेते····तब तक लोक-मङ्गल की भावना से प्रेरित सम्राट् को भी सैनिक बल रखना ही होगा····अतः राजकुमारो, आप लोग भ्रामक विचारो में न पड़ें।

विकटबुद्धि : ठीक है, ठीक है····मौर्य साम्राज्य के परिवर्धकों एवं संरक्षकों, आप लोग प्रधान मन्त्री के पके-पकाये एवं पुष्ट विचारों से अवगत हो गए····आप लोग ध्यान रखें कि राजा प्रजा के पिता समान है····वही राजा राजा है, जो प्रजा का रंजन करे····वह सच्चा सम्राट् है, जो अर्थ, धर्म, काम एवं मोक्ष नामक चारों पुरुषार्थों की प्राप्ति में प्रजा के समक्ष समान अवसर उपस्थित करे····हमारे सम्राट् अशोक ऐसे ही सम्राट् हैं····

अग्निब्रह्मा : मैं इतना ही जानता हूँ कि मेरे धनुषबाण उन आततायियों एवं विद्रोहों के विरुद्ध सदा उठे रहेंगे, जो सम्राट् अशोक के शान्तिमय शासन में कोई अवरोध बन कर उठ खड़े होंगे····मैं अपना उत्सर्ग करने को सदैव प्रस्तुत रहूँगा····

विकटबुद्धि : साधु ! साधु !! मौर्य साम्राज्य को आप पर गर्व है····

अग्निब्रह्मा : मेरी माता कलिंगराज खारवेल की पौत्री थीं····इस प्रकार कलिंगराज से मेरा रक्त-सम्बन्ध था····किन्तु सम्राट् की

माता राजमाता सुभद्रांगी ने आदेश दिया...."आर्य अग्नि-ब्रह्मा तुम सम्राट् के प्रथम जामाता हो....मैं तुम्हारे कर्तव्य की ओर संकेत करती हूँ....तुम मौर्य सेनानायक हो....देखना रक्त-सम्बन्ध प्रबल न पड़ जाए"....यह सुनकर मेरी भ्रहों में बल पड़ गए....और मैं आज तक मौर्य सेना की मान-मर्यादा की रक्षा में लगा हुआ हूँ....

देवपाल : मैं आप श्रद्धास्पदों के समक्ष प्रतिज्ञा करता हूँ कि चाहे राजा ब्राह्मण-धर्मावलम्बी हो, चाहे निर्ग्रन्थवादी हो या जैन अथवा बुद्धवादी हो, मैं शान्ति-स्थापना में सदा लगा रहूँगा....मैं इतना ही जानता हूँ कि सम्राट् की आज्ञा हुई...."आटविकों के विद्रोह को दबाना है, सैन्य-बल के साथ चल पड़ो"....और मैं भाई आर्य अग्निब्रह्मा के साथ चल पड़ा....धार्मिक राज्य अथवा लोक-मंगल की भावना से प्रेरित साम्राज्य एवं राज्य की स्थापना का तात्पर्य कायरता-प्रदर्शन नहीं है और न है आततायियों के समक्ष धनुष-बाण रख कर उनको उपदेश देने लगना....

जालौक : बिल्कुल ठीक है, आर्य देवपाल, हमें आप पर गर्व है....भाई तीवर तो बौद्ध हैं, उन्हें मार-काट से घृणा है....किन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं है कि मैं, आर्य अग्निब्रह्मा, आर्य देवपाल अन्यथा कोई भी सैनिक हिंसक है....हम अपना कर्तव्य करते हैं....सम्राट् ने कलिंग-विजय के उपरान्त अन्य देश नहीं जीते...किन्तु उन्होंने यह तो नहीं कहा कि सब लोग स्वतन्त्र हो जाओ, नियम, विधान तोड़ डालो....बिना नियम, विधान आदि के व्यवस्था नहीं स्थापित होती...., क्यों प्रधान मन्त्री जी....?

खल्लतक : यदि विधान न हो, राजा न हो तो व्यवस्था न रहेगी

और समाज विशृंखल हो जायगा····मात्स्य-न्याय हो जायगा····जिसकी लाठी उसकी भैंस की भयानक परम्पराएँ गूँजने लगेंगी····सम्राट् के द्वितीय जामाता आर्य देवपाल ने बहुत सुन्दर बातें कही हैं। प्रथम राजजामाता आर्य अग्निब्रह्मा एवं द्वितीय राजजामाता आर्य देवपाल मौर्य साम्राज्य के दो पुष्ट स्तंभ हैं····वे केवल वीर ही नहीं····पुष्ट राजनीतिज्ञ भी हैं।

विकटबुद्धि : साधु ! साधु !! प्रधान मन्त्री जी····

प्रहरी : (**झटके से प्रवेश कर**) महाराज आ रहे हैं।

[सब लोग खड़े हो जाते हैं और झुके रहते हैं। सम्राट् अशोक, बालपण्डित, महास्थविर, उपगुप्त एवं मंत्री राधागुप्त प्रवेश करते हैं। सम्राट् की अवस्था लगभग ५० वर्ष, बालपण्डित लगभग ११-१२ वर्ष के हैं। मंत्री राधागुप्त की अवस्था सम्राट् के बराबर है। महास्थविर की अवस्था लगभग ६० वर्ष। सब लोग यथास्थान बैठ जाते हैं।]

सम्राट् अशोक : कब आए प्रधान मन्त्री जी ?

खल्लतक : (**ससम्मान**) आज ही महाराज।

अशोक : और राजकुमार एवं राजजामाता लोग ?

विकटबुद्धि : क्यों नहीं, क्यों नहीं, महाराज ! यह तो मैं ही बताऊँगा, ····मैं सब का मुख हो जाऊँ ? (**सब लोग हँस पड़ते हैं**)···· महाराज····(**कुछ सोच कर**) क्यों नहीं, पहले उन्हीं को, प्रधान सेनापति जी भी आए हैं····महाराज !····वे अभी बाहर गये हुए हैं आटविक विद्रोही वृत्तसेन को साथ में लाने के लिए····

अशोक : ऐसी बात ?

विकटबुद्धि : वे आटविक राज वृत्तसेन के साथ आयँगे भी····क्यों नहीं, उपस्थितों में महाराज राजकुमार जालौक और तीवर अभी-अभी उत्तर दिशा से आ रहे हैं····यहाँ से लगभग ४-५ कोस की दूरी पर दो उच्च पर्वत देखकर आ रहे हैं····और ये रहे हमारे सफल सेना-नायक आर्य कुमार अग्निब्रह्मा एवं देवपाल, जो आटविकों को दबाने के उपरान्त पाटलिपुत्र के मार्ग में आपकी धर्मयात्रा में सम्मिलित हो गये हैं····चारों ओर विजय ही विजय है सम्राट्····क्यों नहीं····क्यों नहीं···· मैंने भी एक भयंकर विजय की है····

[सब लोग अट्टहास कर उठते हैं]

अशोक : आपने भी एक भयंकर विजय की है ?····आप तो विलक्षण हैं।····मैं आज बहुत दुःखी था····सोचा नीलाजन एवं उरविल्वा की रम्य भूमि का दर्शन कर लूँ····मैंने उन सभी स्थानों का परिभ्रमण किया, जहाँ-जहाँ भगवान् तथागत सम्बोधि के पूर्व घूम चुके थे····किन्तु कहीं भी शान्ति नहीं मिली।····यदि शान्ति मिली तो····

प्रधान मंत्री : (विनीत होकर) विकटबुद्धि की बातों में, क्षमा करें महाराज····

अशोक : आप ठीक कहते हैं प्रधान मंत्री जी····इन्हें पाकर मानो मैंने सम्पूर्ण पृथ्वी की विजय कर ली है····

बालपण्डित : ये मेरी पाठशाला हैं महाराज, मैं वेदाध्ययन, बौद्धधर्म-पाठ आदि क्यों करूँ ? जबतक मैं····आप और इनकी संगति में हूँ----मेरा अध्ययन होता रहता है····मैं इनसे क्या-क्या नहीं सीखता ?

अशोक : हाँ, मेरे धर्मसखा····मैं तो, महास्थविर उपगुप्त, तुम्हें, विकट-बुद्धि एवं सभी को पाकर फूला नहीं समाता। माता ने मुझे

आचार्य कौटिलय के राजधर्म अथवा अर्थशास्त्र में शिक्षित किया, आपने मुझे बौद्धधर्म की ओर उन्मुख किया, महा-स्थविर उपगुप्त ने मुझे सद्धर्म में दीक्षित किया, प्रधान मंत्री ने मुझे सँभाला, सँवारा एवं सन्मार्ग दिखलाए राज्यशासन में····मैं आप लोगों से कैसे उऋण होऊँ ?

जालौक : सम्राट्, मैंने जो पर्वतमालाएँ देखी हैं, उनमें गुहाएँ बन सकती हैं

तीवर : सम्राट्, उनमें आप, बौद्धों के लिए गुहाएँ अवश्य बनवा दें—दो पर्वत सर्वश्रेष्ठ हैं····

विकटबुद्धि : क्यों नहीं, क्यों नहीं, अपराध क्षमा हो, मैं अवश्य कहूँगा····कहूँ (**सम्राट् की ओर देखकर**) राजकुमार जालौक एवं तीवर अपने पिता को पिता क्यों नहीं कहते,····'पिता' शब्द बड़ा मोहक है····

अशोक : हाँ, हाँ मेरे स्नेही देवता····मैं आज के दिन तीवर द्वारा बतलाए दोनों पर्वतों में एक का नाम "निग्रोध" पर्वत और दूसरे का "खल्लतक" पर्वत रखता हूँ····राजकुमारों को विदित हो चुका है कि मेरे धर्मसखा बालपण्डित मेरे बड़े भाई सुसीम के पुत्र हैं····यदि ये एक दिन अचानक बौद्ध रूप में गाते हुए मेरे प्रासाद के समीप से न जाते होते तो सम्भवतः मैं बौद्धधर्म की ओर इतना पहले न झुका होता····धर्म का बीज तो बोया मेरे धर्मसखा निग्रोध ने जिन्हें मैं बालपण्डित कहता हूँ····बाद को विकटबुद्धि की विकट बुद्धि से मुझे इसका पूर्ण पता चल गया कि ये मेरी अपनी भाभी के पुत्र हैं····अब तो ये वीतराग हो चुके हैं····मैं इनके नाम को अमर कर देना चाहता हूँ····प्रधान मन्त्री खल्लतक से मैं उऋण नहीं हो सकता····जो कुछ शासन-सम्बन्धी मेरे



[illegible] हैं [illegible] मुझे इतना पूर्ण सहयोग एवं सत्परामर्श मिला है···मैं इनके नाम को भी अमर कर रहा हूँ—कालान्तर में मैं निग्रोध एवं खल्लतक पर्वतों को दरीगृहों से सुशोभित करा दूँगा···बेटे जालौक एवं तीवर, निश्चिन्त रहो···अब तुम लोग जाओ आराम करो **(जालौक एवं तीवर का प्रस्थान)** प्रधान मन्त्री जी, अब आप आराम करें···मौर्य साम्राज्य आप का आभारी है···अब मैं आपको वृद्धावस्था के कारण अवकाश देता हूँ—आप के स्थान पर राधागुप्त मौर्य सम्राज्य के प्रधान मन्त्री होंगे···आज अभी थोड़ी ही देर में बोधि-द्रुम की पूजा के समय इसकी सामूहिक घोषणा हो जाएगी···

खल्लतक : **(उठ कर)** जो आज्ञा···आपकी सारी आज्ञाएँ शिरोधार्य हैं···**(चला जाता है)**

प्रहरी : **(प्रवेश कर)** प्रधान सेनापति उपस्थित हैं महाराज।

सम्राट् : सम्मान के साथ ले आओ।

पुष्यगुप्त : **(प्रवेश कर)** महाराज, मैं आपकी आज्ञा से आटविक विद्रोही वृत्तसेन को उपस्थित करना चाहता हूँ···

अशोक : अवश्य···अवश्य···उन्हें अवश्य उपस्थित कीजिए··· मैं उनसे मिलकर प्रसन्न हूँगा···

पुष्यगुप्त : सैनिको, ले आओ···

[दो सैनिक बँधे वृत्तसेन को खींचकर लाते हैं। वृत्तसेन के सर पर पंख का मुकुट बँधा है। परिधान चर्म का ही है। बायें कंधे पर तूणीर है और एक ओर धनुष बँधा हुआ है।]

अग्निब्रह्मा : **(व्यंग्यात्मक ढंग से)** आ गए मेरे शत्रु···स्वागत है!

देवपाल : इसी ने मुझे विषाक्त बाण मारे थे···मैं भी स्वागत करता हूँ···

अशोक : साधु····साधु····प्रधान सेनापति, इनके बन्धन खोल दीजिए ये हमारे अतिथि हैं····

अग्निब्रह्मा : }
देवपाल : } सम्राट् !

राधागुप्त : महाराज····यहाँ हम सभी निरस्त्र हैं !···

पुष्यगुप्त : चिन्ता नहीं····मैं और दो सैनिक तो हैं····

अशोक : (**उठता हुआ**) आप लोग घबड़ाएँ नहीं···अपने आसन पर आप लोग बैठे रहें···मैं अपने हाथों इनका बन्धन खोलूँगा

वृत्तसेन : मौर्यराज, मैं नहीं डरता·······आप मुझे मार डालें···· मेरी बोटी-बोटी काट डालें·······मैं चूँ भी नहीं बोल सकता····मैं निहत्थों पर अस्त्र-शस्त्र नहीं चलाता····लेकिन यदि मुझे किसी ने ललकारा····मैं अपने को भूल कर उसे नोच डालने का प्रयत्न करूँगा····मेरी आँखों के समक्ष मेरे दो प्रतिद्वन्द्वी बैठे हुए हैं, जिन्होंने मेरे राज्य की निहत्थी जनता पर बाण-वर्षा की है, उन्हें देखकर मेरा खून खौल उठा है····मौर्य-राज, आप की सेना बड़ी थी····हम टिक न सके ····किन्तु मैं पूछूँ ····क्या यही वीरता है, क्या यही पुरुषत्व है कि मौर्य-सेना निहत्थों पर टूट पड़े ? (**विदग्ध होता हुआ**) आज मेरा राज्य नर-नारियों, बूढ़े, बच्चों से एक प्रकार से शून्य हो चुका है····मेरी नसों में प्रतिहिंसा की अग्नि सुलग रही है····मुझे मौर्य-सेनानियों ने पशु की भाँति बाँध डाला है····क्या मैं पशु हूँ ? माना, मेरे वेश, चाल-चलन और आपके वेश, चाल-चलन आदि में अन्तर हैं····किन्तु हूँ तो मानव ?···· मुझे यहाँ तक बाँधकर लाया गया है····घसीटा गया है····मौर्यराज, मैं पूछता हूँ····मुझे

बन्दी क्यों किया गया है ? मुझे मार क्यों नहीं डाला गया ? वीर लड़ते हैं····वीर-गति प्राप्त करते हैं····किन्तु छोटे-छोटे दूधमुँहे बच्चे या बूढ़े नर या नारियाँ तो नहीं लड़तीं ?····मौर्य-सेना ने उनका हनन क्यों किया ? ····मौर्य-राज····आज्ञा दीजिए अपने सैनिकों को····वे मेरा सर धड़ से अलग कर दें····या आज्ञा दीजिए····इन दो वीरों को···· मैं उनसे अलग-अलग मल्ल-युद्ध करूँगा····यदि ये मुझे पछाड़ दें तो मैं अपने को मार डालूँगा····

अशोक : **(पार्श्व में जाकर)** तुम वीर हो वृत्तसेन, मैं तुम्हारी वीरता को मान दे रहा हूँ····तुमने जो कुछ कहा है, यदि वह सत्य है तो मैं दुखी हूँ····बहुत दुखी हूँ····और उसका प्रायश्चित करूँगा ····अब तो जो होना था, हो चुका वीर····अब यह सोचना है कि आगे हम क्या करें····मैं आप से प्रार्थना करता हूँ कि आप मुझे आज्ञा दें और मैं आप का बन्धन स्वयं खोलने का सौभाग्य प्राप्त करूँ····

महास्थविर उपगुप्त : साधु ! साधु !!

[सभी लोग साधु ! साधु !! बोल उठते हैं]

वृत्तसेन : **(लजाता हुआ)** आप मुझे और लज्जित न करें महाराज···· **(आँखों में अश्रु लेकर)** आप सचमुच महान् हैं····मैं प्रार्थना करता हूँ····आप खोल दीजिए मेरे बन्धनों को···· मैं आप से मित्रता स्थापित करना चाहता हूँ····

[सम्राट् स्वयं वृत्तसेन का बन्धन खोलता है ।]

विकटबुद्धि : क्यों नहीं, क्यों नहीं····मैं आशीर्वाद देता हूँ वृत्तसेन तुम्हें····

वृत्तसेन : **(हाथ जोड़कर)** महाराज की जय हो····

अशोक : आर्य अग्निब्रह्मा एवं आर्य देवपाल, उठो, भाई वृत्तसेन के

गले मिलो····और इनसे क्षमा माँगो····

[अग्निब्रह्मा, देवपाल एवं वृत्तसेन एक दूसरे के गले मिलते हैं···इसी बीच वातावरण घड़ी-घण्टों के स्वर से गुञ्जित हो उठता है।]

अशोक : (उपगुप्त की ओर देख कर) धर्मगुरु, लगता है, पूजा का समय हो गया है····अब आप सभी लोग कुछ पलों के लिए बोधि-द्रुम के पास चलें।

[सब लोग चले जाते हैं ···अचानक रंगमंच अंधकारमय हो उठता है, पीछे-से पीली-पीली आभा में धूम्र-गुच्छ ऊपर उठने लगते हैं···सहसा प्रकाश हो जाता है। नेपथ्य से बुद्ध-स्तुति होती है···रंगमंच पर एक प्रतिहारी आकर स्तुति की लय में धौंसा बजाने लगता है।

बुद्ध-स्तवन

जय हे
भगवान् तथागत की महिमा
जय हे, जय हे, जय हे····
भगवान् तथागत की गरिमा
जय हे, जय हे, जय हे····
तेरी महिमा अग्नि-शिखा-सी श्वेत
तेरी गरिमा धर्म्म-विभा-सी श्वेत
हे शान्ति दूत, हे दयाकार !
हे जन्म-हरण, हे मरण-हरण।
हे मुक्तिदेव, हे सुखागार !
हे पूज्य अहिंसा की महिमा
जय हे, जय हे, जय हे····
यह धर्म-धरणि !

यह संघ-तरणि…जिस पर जमते हैं ज्ञान पूत
यह भिक्षु-भिक्षुणी-संघ तरणि
यह महाबोधि है महापूत !
यह बुद्धदेव की ताप-धरणि
भगवान् तथागत का धम्मं
भगवान् तथागत का संघं
भगवान् तथागत की महिमा
जय हे, जय हे, जय हे….
बुद्धं शरणं गच्छामः
संघ शरणं गच्छामः
निर्वाण-बुद्ध, निर्वाण-धम्म, निर्वाण-संघ की यह महिमा
जय हे, जय हे, जय हे….

[एक बार पुनः रंगमंच अंधकार युक्त हो जाता है। प्रकाश के साथ ही सम्राट् अशोक, बालपण्डित, महास्थविर उपगुप्त आते हैं और यथास्थान बैठ जाते हैं।]

अशोक : धर्मगुरु, आप की कृपा से मैंने सम्बोधि का दर्शन कर लिया…अपूर्व शान्ति का स्थान है यह… अब मैं आगे के कार्यक्रम की योजना के पूर्व देवी असंधिमित्रा से मिल लेना चाहता हूँ…

बालपण्डित : यह देवी कौन हैं महाराज ! भाई महेन्द्र एवं बहन संघमित्रा उनके इधर-उधर बैठे बुद्ध-स्तुति कर रहे थे….

अशोक : हाँ, मेरे धर्मसखा, देवी असंधिमित्रा मेरे जीवन की एक अति प्रिय एवं अति कठोर आख्यायिका हैं….तुम्हें सब कुछ जानना चाहिए….जब पिता सम्राट् बिन्दुसार के राजत्व-काल में मैं उज्जयिनी का प्रान्तपति था तो मैंने विदिसा की एक सेठ की पुत्री से विवाह किया था। वही देवी असंधि-मित्रा हैं। जब मैं सम्राट् हो गया तो राजमाता की आज्ञा

से वे पाटलिपुत्र नहीं आने पायीं। राजमाता की मृत्यु के उपरान्त मैंने उन्हें बुला भेजा····किन्तु उन्हें ठेस लग चुकी थी और तब तक वे भिक्षुणी हो चुकी थीं····यह संयोग की बात है कि आज इस पूत स्थान पर उस देवी का दर्शन हो पा रहा है।

बालपण्डित : सम्राट्····उन्हें देख कर भक्ति उमड़ती है····

महास्थविर उपगुप्त : महाराज, सम्भवतः आपको नहीं ज्ञात, ये मेरी शिष्या हैं····उन्हें देखते ही मैंने पहचान लिया····उन्होंने भी मुझे देख लिया है····बोधि-द्रुम के पास हम लोगों ने जान-बूझ कर एक दूसरे से भेंट नहीं की, क्योंकि वह सम्राटोचित मर्यादा के विरुद्ध होता····

अशोक : गुरुदेव, यह सब आप की कृपा है····मैं जो कुछ सीख चुका हूँ····अथवा कर सका हूँ····सब आप ही ऐसे गुरुजनों की कृपा का फल है।

उपगुप्त : मैं तो निमित्त मात्र हूँ महाराज ! इस जम्बू-द्वीप में उत्तर से दक्षिण एवं पश्चिम से पूर्व सभी पवित्र स्थानों का परिभ्रमण कर चुका हूँ····भाँति-भाँति के छोटे-बड़े राजाओं से मिल चुका हूँ····किन्तु कहीं भी मेरा मन नहीं जमा····पता नहीं, क्यों, आप में क्या आध्यात्मिक आकर्षण है कि मैं हठात् खिंच आया····आपको एवं बालपण्डित को देखता हूँ, तो लगता है····हम तीनों पूर्व जन्म के साथी रहे हैं····

विकटबुद्धि : **(प्रवेश कर)** क्यों नहीं, क्यों नहीं, मैं तो उस जन्म में भी अवश्य साथ रहा हूँ····क्यों महाराज ?

अशोकः आइए, आइए ब्राह्मण महाराज ! किन्तु देवी असंघिमित्रा ?

विकटबुद्धि : वे भी साथ हैं महाराज····

[भिक्षुणी के वेश में असंधिमित्रा का प्रवेश, साथ में राजकुमार महेन्द्र एवं राजकुमारी संघमित्रा भी हैं]

अशोक : (खड़ा होकर) आइए देवी जी, आसन ग्रहण कीजिए····
[सब लोग यथा-स्थान बैठ जाते हैं ।]

असंधिमित्रा : यहाँ मेरे आराध्यदेव एवं धर्मगुरु दोनों उपस्थित हैं ····यह मेरा परम सौभाग्य है····

बालपण्डित : मैं भी उपस्थित हूँ····माँ····

असंधिमित्रा : (पास जाकर) मैं तो भूल ही गयी बेटा····तुम अपना परिचय दो भदन्त····(सर सहलाने लगती है)

महेन्द्र : माँ, ये ही पिता जी के धर्मसखा हैं, जिनके विषय में मैं अभी कह रहा था····

संघमित्रा : माता जी, ये हमारे स्वजन हैं····पिता जी के बड़े भाई सुसीम के पुत्र हैं ये माता जी····

असंधिमित्रा : यह तो हमारा सौभाग्य है····ये कैसे मिल गए सम्राट्····

अशोक : बड़ी मनोरम कहानी है देवी,····फिर कभी सुना दूँगा····इस समय मुझे जो सुखानुभूति मिल रही है····उसका मूल्यांकन मैं किन शब्दों में करूँ ?····

बालपण्डित : अब आप बैठ जायँ माँ····अब तो मैं आप का साथ नहीं छोड़ता····

महेन्द्र : माँ, मुझे भी बौद्ध बना दो माँ····

असंधिमित्रा : चलो न बेटा महेन्द्र एवं भदन्त बालपण्डित, मेरे देश अपने ननिहाल····वहाँ मैंने एक पहाड़ी पर एक चैत्य बनवाया है, जिसे अब 'चैत्यगिरि' कहा जाता है ।···वहीं रहना····किन्तु अपने पिता जी से आज्ञा लेकर आना····

अशोक : (**आँखों में अश्रु लेकर**) देवी, ये तुम्हारे ही हैं, तुम इन दोनों को अपने साथ रखो और सन्मार्ग में लगाओ····

बालपण्डित : महाराज अब मैं भी माँ के साथ रहूँगा····

संघमित्रा : क्यों माँ, मुझे साथ न ले चलोगी ? मैं ही अपनी माँ की स्नेह-छाया से क्यों दूर रहूँ ? माँ, अब मेरा जीवन इस संसार-लीला से ऊब चुका है····मैं भी भिक्षुणी वेश धारण करना चाहती हूँ····राजगुरु महास्थविर उपगुप्त हम दोनों भाइयों को भी दीक्षित कर दें, तो सारा राज-परिवार····

विकटबुद्धि : बौद्ध हो जाता, क्यों नहीं, क्यों नहीं, कोई बात नहीं···· मैं तो अपना धर्म नहीं छोड़ता····मैं अपने ब्राह्मणत्व को····

अशोक : नहीं छोड़ूंगा····यही न ? हाँ ब्राह्मण देवता····लेकिन मेरे बच्चो, क्या तुम लोग एक साथ ही मुझे छोड़ दोगे ? बेटी संघमित्रा, तुम्हें तो अपने पति आर्य अग्निब्रह्मा से पूछ लेना होगा····

विकटबुद्धि : क्यों नहीं, क्यों नहीं, उसी प्रकार, जिस प्रकार देवी असंधिमित्रा ने आप से पूछ लिया था····क्यों ?

असंधिमित्रा : मुझे और न लजवाइए····ब्राह्मण देवता····

विकटबुद्धि : तो आ जाइए न पुनः प्राचीन मार्ग में····आप की ये प्यारी संतानें और हम सभी साथ रहेंगे ···

असंधिमित्रा : अब बहुत देरी हो गयी····ब्राह्मण देवता····

अशोक : मैं किस मुँह से कहूँ ?····मैं तो चाहूँगा कि सभी साथ ही रहें····

विकटबुद्धि : क्यों नहीं, क्यों नहीं,····जब से मैं यहाँ आया हूँ···· किसी ने भी मोदक नहीं खिलाया····(**सब लोग हँस पड़ते हैं**)

उपगुप्त : कोई बात नहीं, महाराज····अभी तो हम बहुत दिनों तक

साथ रहेंगे ''अभी तो ऋषिपत्तन, कुशीनगर, श्रावस्ती, कौशाम्बी आदि तीर्थ-स्थानों की यात्राएँ करनी ही हैं''''
भिक्षुणी देवी असंधिमित्रा तो तीर्थाटन को ही निकली हैं''''

बालपण्डित : हाँ, महास्थविर''''बस''''सब कुछ आप ही पर रहा''''
अभी तो हम कुछ दिन और रहेंगे न महाराज ?

विकटबुद्धि : पहले तुम लोग देवी असंधिमित्रा की सेवा करो''''उनके आतिथ्य-सत्कार में लगो''''तब आगे का कार्यक्रम बनेगा''''
सब कुछ उनकी प्रसन्नता पर निर्भर है''''

अशोक : और तभी आप के लिए मोदकों की व्यवस्था हो सकेगी, क्यों !

उपगुप्त : हाँ, बच्चो, तुम लोग उन्हें आतिथ्य-शिविर में ले जाओ''''
क्यों सम्राट् !

अशोक : हाँ, हाँ; गुरुदेव ''''आप भी अब चलें, विश्राम करें'''' दिन बहुत ऊपर चढ़ आया''''आज घूमने में पर्याप्त देरी हो गयी''''

उपगुप्त : आपने यहाँ जो मन्दिर बनवा दिया है, वह अभूतपूर्व है''''
दर्शक उसे देखते ही रह जाते हैं''''अब आप, जहाँ आज बैठे हुए हैं''''यहाँ एक विशाल विहार बनवा दें''''जिससे यात्रियों को सुख एवं आराम मिले''''

अशोक : ऐसा ही होगा गुरुदेव''''अच्छा अब आप लोग आराम करें''''

[उपगुप्त, देवी असंधिमित्रा, महेन्द्र, संघमित्रा, बालपण्डित चले जाते हैं]

सम्राट् : विकटबुद्धि ! क्या समाचार है ?

विकटबुद्धि : (थोड़ा पास में जाकर) महाराज, रानी तिष्यरक्षिता के

सभी षड़यन्त्रों का पता चला लिया····

सम्राट् : (**सहसा उठकर**) षड़यन्त्रों का पता····!

विकटबुद्धि : महाराज आप घबड़ाएँ नहीं····मैंने सब कुछ सँभाल लिया है····मैं एक बन्दी आप के समक्ष उपस्थित करके सभी बातें स्पष्ट कर दूँगा···· नए प्रधान मंत्री राधागुप्त से भी सारी बातें कह दी हैं मैंने····

प्रहरी : (**प्रवेशकर**) महाराज प्रधान मंत्री राधागुप्त आ रहे हैं····

अशोक : आ जायँ तो शीघ्र भेजो····हाँ, तो कौन-सा बन्दी ?

विकटबुद्धि : मैं बुलवाता हूँ महाराज····(**द्वार के पास जाकर**) प्रहरी····

प्रहरी : (**प्रवेशकर**) आज्ञा महाराज····

विकटबुद्धि : श्रमण महल्लक को बन्दी-शिविर से ससम्मान ले आओ

प्रहरी : जो आज्ञा (**चला जाता है**)

[**इसी बीच नए प्रधान मंत्री राधागुप्त का प्रवेश होता है**]

अशोक : आइए, हमारे नए प्रधान मंत्री जी, बैठिए (**प्रधान मंत्री आसन ग्रहण कर लेता है**)

अशोक : अब क्या किया जाय ? अब तक के सारे षड़यन्त्रों में तुमने मेरी सहायता की है····और मुझे तथा सम्राज्य को बचाया है····मेरी लम्बी-लम्बी योजनाओं की भित्ति तुम्हीं हो मेरे मित्र····मैं तुम्हारे बिना एक पल भी नहीं रह सकता····

राधागुप्त : कैसा षड़यन्त्र महाराज ?

अशोक : हाँ, प्रधान मंत्री, आप भी देख लें, सुन लें····विकटबुद्धि की कृपा से एक बहुत बड़े षड़यन्त्र का भण्डाफोड़ हुआ है····

राधागुप्त : वह तो सुन चुका हूँ महाराज !

विकटबुद्धि : यह सब तो आपकी कृपा है····नहीं तो मैं क्या हूँ····मेरे

समान कितने ब्राह्मण भिक्षा माँगते फिरा करते हैं···· महाराज····आपने साधारण पत्थर को कौस्तुभमणि समझ लिया है

अशोक : अच्छा····अच्छा····भाई विकट तुमने क्या किया है····यह अभी विदित होगा मैं तुम्हें किस नाम से सम्बोधित करूँ····

विकटबुद्धि : क्यों नहीं, क्यों नहीं····महाराज, क्यों नहीं, आप मुझे देवता कहें····सब तो मुझे ब्राह्मण महाराज, देवता आदि कहते ही हैं।

अशोक : मैं तो तुम्हें बौद्ध ब्राह्मण कहूँगा····

विकटबुद्धि : क्यों नहीं, क्यों नहीं, एं? बौद्ध ब्राह्मण? यह क्या महाराज····पुरस्कार, उपाधि तो अलग····आपने गाली देनी आरम्भ कर दी····(**रुक कर**) क्यों नहीं, आप मुझे ब्राह्मण बौद्ध कह सकते हैं····क्योंकि मैं ब्राह्मण और आप बौद्ध···· दोनों अपने धर्म में कट्टर····मैं आप का साथ आमरण नहीं छोड़ूँगा····अतः मैं अपने को····

अशोक : ब्राह्मण बौद्ध कहलाना चाहूँगा, यही न?
[सहसा तीव्र स्वर के साथ हँस पड़ते हैं।]

विकटबुद्धि : (**फक्क है**) क्यों महाराज?

अशोक : किसी-न-किसी प्रकार तुमने अपने को बौद्ध कहला ही लिया····

विकटबुद्धि : क्यों नहीं, क्यों नहीं, एं? बौद्ध? नहीं महाराज····
(**इसी बीच दो प्रहरी श्रमण महल्लक के वेश में कुदन्त को लेकर उपस्थित होते हैं।**) यह लीजिए····आगए मेरे मित्र श्रमण महाराज····

अशोक : यह क्या? ये तो सचमुच श्रमण महल्लक हैं? इन्हें बन्दी

क्यों किया गया है ?

विकटबुद्धि : नहीं महाराज, ये उनके नट हैं, यह देखिए····(**इतना कह कर विकटबुद्धि उनकी दाढ़ी-मूछ खींच लेता है···सर की जटा नोच-नाच कर फेंक देता है**)

अशोक : ऐं ? तुम कौन हो जी ?

[**प्रधान मन्त्री हठात् खड़े हो जाते हैं**]

विकटबुद्धि : महाराज तिष्यरक्षिता ने श्रमण महल्लक से, यहाँ आने के पहले ही, परिचय कर लिया था। वे चाहती थीं कि उनकी सहायता से आपके धार्मिक प्रयत्नों एवं यहाँ के धार्मिक कृत्यों में बाधा पहुँचावें और साथ-ही-साथ राज-परिवार के लोगों की हत्या करा दें····। इसी पुरुष के द्वारा कल रात्रि में उन्होंने बोधि-द्रुम को जला डालने का षड़यंत्र किया था। मैंने इनके एवं रानी की सहेली अनुराधा के प्रयत्न विफल कर दिए····यह पापी आपके समक्ष खड़ा है···· अब आप इसे दण्डित कीजिए····

अशोक : आप बैठ जाइए प्रधान मन्त्री जी, (**वृक्षसेन से**) क्यों महाराज ! आप कौन हैं ?

[**राधागुप्त बैठ जाता है**]

कुदन्त : मैं कलिंगवासी हूँ····

अशोक : यहाँ कैसे आए हो ?

कुदन्त : बदला लेने····आपका सत्यानाश करने····

अशोक : क्यों ?

कुदन्त : आपने कलिंग-युद्ध में मेरे परिवार का सत्यानाश कर दिया···

अशोक : ओह ! प्रहरियो···छोड़ दो इनके बन्धनों को···नहीं हटो···· मैं स्वयं बन्धन खोलता हूँ (**बन्धन खोलता है।**) हाँ···भाई,

लो प्रतिशोध····मैं तुम्हारे सामने खड़ा हूँ····प्रधान मन्त्री, अपना खड्ग तो दीजिए····(**राधागुप्त ससम्मान खड्ग देता है। अशोक उसे कुदन्त की ओर फेंक देता है**)····लो मारो····मुझे····हट जाओ प्रहरियो····चले आओ····इधर····प्रधान मन्त्री, ब्राह्मण बौद्ध विकटबुद्धि आप सभी चले आवें इधर····इस व्यक्ति को निरवरोध आक्रमण करने दें····आओ बंधु····उठाओ कटार····कर दो पार मेरी छाती के····और बुझा लो अपनी आग····

राधागुप्त : महाराज ! (**बढ़ कर सामने चला जाता है**)

अशोक : घबड़ाइए नहीं, प्रधान मन्त्री····विकटबुद्धि, सँभालो प्रधान मन्त्री को····

कुदन्त : नहीं····नहीं····क्षमा करें महाराज, रानी तिष्यरक्षिता ने ही मुझे प्रेरित किया था····मैं हत्यारा अवश्य था महाराज····और मैं चाहता था कि आपका····आपके परिवार का अनभल करूँ····रानी के प्रलोभन में पड़ गया महाराज····क्षमा करें महाराज····(**झुक पड़ता है**)

अशोक : (**उठा कर छाती से लगाता हुआ**) मैंने अपराध किया····और मैं प्रायश्चित्त कर रहा हूँ····तुम्हें अपराध करने की क्या आवश्यकता थी वीर !····जाओ····स्वच्छन्द विचरण करो मौर्य सामाज्य में····तुम स्वतन्त्र हो····हो सके तो इस भेद को अपने सीने में ही रखना····

कुदन्त : अच्छा महाराज····मैं महान् अपराधी हूँ····मैंने पाप किया है—रानी तिष्यरक्षिता ने मुझे आसव पिला-पिला कर भ्रष्ट कर दिया है····अब मैं मनुष्य बनना चाहता हूँ····महाराज····मुझे अपने पास ही रख लीजिए····

विकटबुद्धि : क्यों नहीं, क्यों नहीं,····प्रहरी, तुम लोग इन्हें आतिथ्य-

शिविर में ले जाकर इनका आदर-सत्कार करो····

[प्रहरी कुदन्त को लेकर चले जाते हैं ।]

राधागुप्त : महाराज, अब आप चलिए आराम कीजिए····इस भीषण काण्ड से आप हिल उठे हैं····

अशोक : अब आज ही संध्याकाल हम ऋषिपतन को चल पड़ेंगे····अब मैं यहाँ एक क्षण नहीं रुक सकता····प्रधानमन्त्री जी, आप इस शिविर के स्थान पर एक सुन्दर विहार बनवाने की व्यवस्था कर देंगे····गुरुदेव महास्थविर की आज्ञा है····

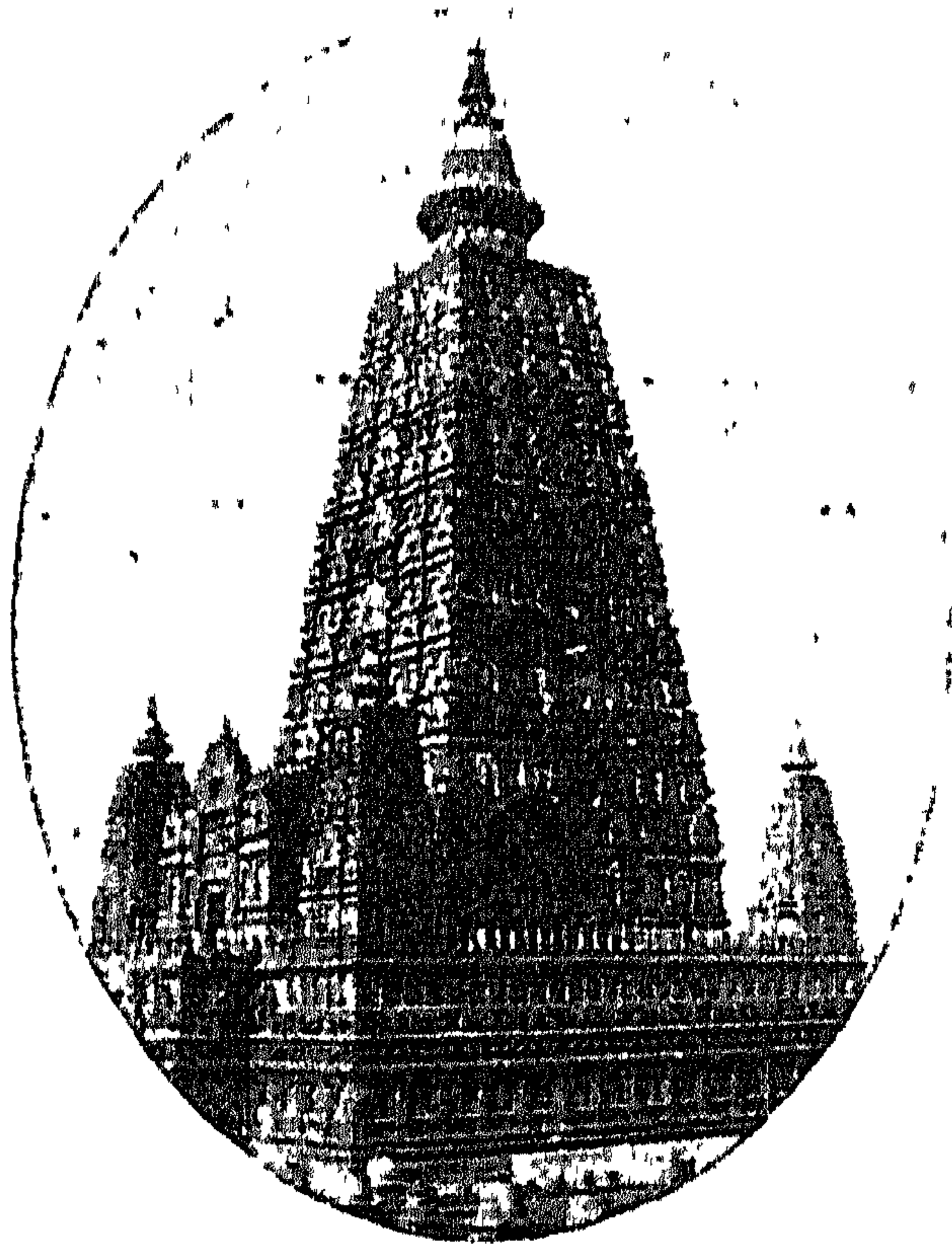
राधागुप्त : आज्ञा····शिरोधार्य है महाराज····

अशोक : विकटबुद्धि, रानी तिष्यरक्षिता पर ध्यान रखना····मैं····तुम्हारी कृपा, चातुरी, बुद्धि एवं तुम्हारे साहस के लिए क्या पुरस्कार दूँ—

[गले से चिपट जाता है]

विकटबुद्धि : क्यों नहीं, क्यों नहीं···

[आवरण]



रंगमंचीय उपादान

सम्बोधि की छाया में के अभिनय-संबंधी उपादानों में निम्नलिखित रंगमंचीय उपादान द्रष्टव्य हैं। गया के कलाकार-कुल-श्रेष्ठ श्री विष्णुदेव नारायण सिंह ने परिश्रम कर यह सूची प्रस्तुत की है। एतदर्थ मैं उनका आभार स्वीकार करता हूँ।

रंगमंच-निर्माण-संबंधी :—

माप रंगमंच············सुविधानुसार	सूई और तागा····१–१ (अण्टी)
चौकियाँ ६′×४′, संख्या ,,	पर्दा (जंगल और पहाड़) ····१
बल्ला-बाँस····१५	पर्दा (सफेद, ड्राप से ६ फीट पर) १
तार············६६′	ड्राप (सबसे आगे) ············१
रिंग··············३ दर्जन	झालर················३
रस्सी (सावे)····८५ सेर	फ़ूट लाइट साइड····१
रस्सी (सूत)··········· ३ लुंडी	साइडिंग··············· ४
सेफ्टी पिन···· ······ २ दर्जन	कट सीन (महाबोधि मन्दिर का एक भाग)····१
कट सीन शिविर····१	कट सीन (पीपल का पेड़)········१

प्रकाश, बिजली आदि :—

[फिटिंग ऐसी हो कि वह दर्शकों को दिखाई न पड़े]

बल्ब············५००············२ ,,·············२००·············३ मर्करी ········४′ वाली (ब्लू) २	स्काई लाइट ऊपर, विभिन्न प्रकाश-प्रभात दिखाने के लिए

बल्ब (फूट लाइट)········१००········१० (सफेद ६, ब्लू ४)
फोकसिंग (दोनों पार्श्व से)········२ (सभी रंगों वाले कागज़)
टेबुल पंखा···········२ (मन्द हवा दिखाने के लिए)

दृश्य-सज्जा-संबंधी :—

बड़ी चौकी········१	निशान पान········२

स्नान की चौकियाँ ४	चँवर··············२
राजसिंहासन···· १ [सुनहला]	परात·········२ (ढक्कन सहित)
साधारण आसन ८ [सुनहला रुपहला]	घंटा या नगाड़ा····१ (हथौड़ा एवं स्टैंड सहित)
तिपाइयाँ ···· ····४	इत्रदान, गुलाबपाश } १ सेट, परात या ट्रे में रखा हुआ
कालीन············१	धूपदान १, स्टैंड सहित धुआँता हुआ
मेज पोश·········४ [मखमली]	मशालदान, चार-चार मशालों का २ सेट
मसनद············२ ,,	या दीप-गुच्छ दस-दस दीपों का २ ,,
छत्र या शाहनशी १ सेट	गमला (पीतल) स्टैंड सहित····४
बल्लम············ ४	सिकड़ (लोहे की जंजीर) वृत्तसेन के लिए····१
बर्छे···············६	

आगमन, पूजा-संबंधी :—

धौंसा या नगाड़ा·········१	शंख················२
तुरही या रण-सिंहा····१	वीणा···· ···· ····१
झाल·······················२	मृदंग···· ···· ····१
घंटा························१	तानपूरा············१

मौर्य-पताका········१ (शिविर शिखा के लिए)

तलवार··············· }
ढ़ाल··················· } तीन-तीन अददों में अड़ाकर या पर्दों पर ही लटका कर रखने के लिए
भाला·················· }

टिप्पणी :—

१ रंगमंच एवं दृश्य-सज्जा के विषय में मौर्यकालीन राजकीय सजावट (जहाँ तक ऐतिहासिकता प्राप्त हो सकी हो) पर ध्यान देना परमावश्यक है।

२ सभी सामग्रियों पर विशेषतः शिविर-सिंहासन आदि पर मौर्य एवं बौद्धकालीन कला की छाप जहाँतक संभव हो दी जानी चाहिए जिससे तत्कालीन वातावरण की कल्पनात्मक उपस्थिति हो सके।

लेखक की अन्य रचनाएँ

साहित्यिक :

(१) परमाणु बम
(२) नया युग
(३) कवि-प्रिया
} एकांकी नाटकों के संग्रह

(४) दो क्षण
(५) जागते सपने
} कविता-संग्रह

(६) प्रियदर्शी अशोक (नाटक)

मनोविज्ञान-सम्बन्धी :

(१) बाल मनोविज्ञान
(२) सामान्य मनोविज्ञान (दो भाग)
(३) संक्षिप्त सामान्य मनोविज्ञान
(४) बचपन-विकास का संक्षिप्त मनोविज्ञान
(५) Educational Psychology
(६) Problem of Discipline

इतिहास-सम्बन्धी :

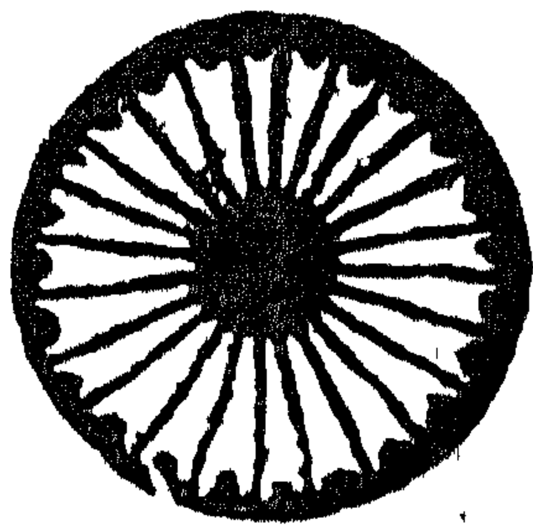
(१) आदि भारत
(२) विश्व के इतिहास एवं सभ्यता का परिचय
(३) आदि मिस्र

आदि.... आदि....



आचार्य श्री अर्जुन चौबे काश्यप हिन्दी संसार के परिचित कलाकार हैं। इनकी बहुमुखी प्रतिभा साहित्य में अनेक रूपों में उतरी है। इतिहास, मनोविज्ञान, दर्शन, शिक्षा, काव्य, नाटक एवं निबंध कोई भी ऐसा अंग नहीं जो श्री काश्यप जी की कुशल लेखनी से अलंकृत न हुआ हो। डा० रामचरण महेन्द्र (अपनी उत्कृष्ट पुस्तक हिन्दी एकांकी पृष्ठ, २३५) के शब्दों में "काश्यप जी मौलिक बुद्धिवादी दृष्टिकोण तथा नई विचारधारा लेकर हिन्दी एकांकी क्षेत्र में अवतीर्ण हुए हैं......। इन्होंने नये ढंग से जीवन और समाज पर विचार किया है।" इनके नाटकों में अभिनयशीलता, भौतिक परिवेश, सामाजिक वातावरण, वैज्ञानिक साहित्यिकता, नव चेतना एवं प्राचीनता में जो कुछ भी सुन्दर हितकर तथा स्वस्थ है उसे व्यापक बनाने की प्रवृति एवं बल सर्वत्र उपलब्ध हैं। 'सम्बोधि की छाया में' में काश्यप जी समधिक उदात्त होकर आये हैं। हमें आशा है हिन्दी संसार इस अनुपम कृति का स्वागत करेगा।

—प्रकाशक



मुद्रक—गया प्रिंटर्स, गया